श्री दधिमथी पुराण

दत्ताशुभं दधिमथी स्वकुलस्थ देवी, दाधिचवंश कमलावली सुर्यरूपा ।
यस्यस्तुवर्ण कृपया वयमन्न नूनम्, पीयूष वर्षण महोत्सव प्राप्नुयाम् ।।

माँ दधिमथी
गोठमांगलोद (नागौर)

महर्षि दधीचि

माँ भगवती मातेश्वरी मंदिर ''दधिमथी भवन''

गोठ मांगलोद, नागौर, राजस्थान

॥ श्री सती माता॥ ॥ श्री सांई ॥ ॥ श्री पितृ देवाय ॥

माँ दधिमथी की जय

दो शब्द

सांसारिक जीवन में और दैनिक नित्य प्रति व्यवहार में हम माँ दधिमथी के स्मरण में लीन रहकर परम लक्ष्य की प्राप्ति के लिये प्रयत्नशील हो, यही धर्म और अध्यात्म का संदेश है ।

परम प्रभु की प्राप्ति के साधन में भक्ति एक प्रेम पूर्ण माध्यम है। हम भक्तिमय होकर ईश्वर प्राप्ति के लिये बेचेन हो उठते हैं जो अन्ततः हमें लक्ष्य प्राप्ति के लिये हमारे धर्मपथ को प्रशस्त करती है।

मंगल पाठ व भजन के इस प्रयास से ईश्वरोन्मुखी होना ही हमारा उद्देश्य है और माँ दधिमथी की भक्तिपूर्ण आराधना हमारे इसी भाव का परिणाम है ।

हमें विश्वास है कि भक्त समाज इस पुस्तिका का स्वागत करेगा और माँ दधिमथी के प्रति श्रद्धा के प्रचार के हमारे प्रयास को सार्थक बनायेगा ।

अपने भक्तों पर माँ दधिमथी की कृपा वृष्टि हो । यही शक्तिस्वरूपा से हमारी प्रार्थना है ।

की ओर से सप्रेम भेंट

卐 नित्य मंगल पाठ 卐

यह ''दधिमथी पुराण'' आप अपने प्रियजनों को उपहार स्वरुप देने के लिए मात्र छपाई मूल्य पर प्राप्त कर सकते हैं।

॥ श्री दधिमथ्यै नमः ॥

भूमिका

प्रिय दाधीच बन्धुओं ! यह बात आपको विदित ही है कि संसार-सागर से पार करने वाली तथा धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष देने वाली एकमात्र कुलदेवी भगवती जगजननी श्री दधिमथी अम्बा ही है, जिसकी महिमा संपूर्ण संसार में प्रसिद्ध है। उसी माता की असीम कृपा से हमारे मूलपुरुष श्री दधीचि ऋषि दानवीर तथा परोपकारियों में अग्रगण्य हुए थे।

उसी जगदम्बा की महिमा वेद, तन्त्र, उपनिषद, महाभारत, श्री मदभागवत महापुराण, ब्रह्मवैवर्त तथा कालिकापुराण एवं श्री दधिमथी माहात्म्य आदि ग्रंथो में स्थान-स्थान पर वर्णित है। आधुनिक करण के इस युग में इन ग्रन्थो का प्रत्येक घर में होना दुर्लभ है। अतएव इसकी आवश्यकता जानकर इस दुर्लभ पुनीत कार्य की आवश्यकता का विचार कर परमपिता परमेश्वर भगवती दधिमति की कृपा से हमने श्री दधिमथी तथा दधीचि ऋषि के पुनीत लोकोत्तर चरित्रों को उपर्युक्त आर्पग्रंथो में से उद्‌धृत कर ''दधिमथी पुराण'' नाम से संगृहीत कर प्रकाशित करने का स्वमत्यनुसार प्रयास किया है।

इस पुराण में श्री विष्णु से जगदुत्पत्ति, ब्रह्मा, अथर्वण ऋषि, श्री दधिमथी, दधीचि ऋषि, पद्मा, पिप्पलाद मुनि तथा दाधीचों की उत्पत्ति एवं दाधीचों के गोत्रों का वर्णन, कपालपीठ की महिमा और मान्धाता को देवी से वर प्राप्ति इत्यादि बहुत ही सुन्दर आनन्ददायक इतिहासरूपी पुरातन कथाओं का वर्णन हैं।

जिसके पठन एवं श्रवण से श्री दधिमथी की पूर्ण भक्ति का लाभ उठा सकेंगे।

इस पुस्तक के प्रकाशन में जीवन के प्रत्यक्ष अनुभवों को आप तक प्रेषित करना भी हमारा एक पुनीत उद्देश्य रहा है। 'दधिमथी पुराण' के पठन व श्रवण से हमने जो जीवन में प्राप्त किया हैं, वह आन्नद, माँ भगवती का वह शुभाशीर्वाद आप सभी को भी मिलता रहें, प्रत्येक जन इस लाभ में शामिल हो। हमारे जीवन की सम्पूर्ण सफलता, हमारे संयुक्त परिवार की शान्ति, सुख और समृद्धि, सम्पन्नता का आधार ''दधिमथी पुराण'' माँ जगदम्बा का स्नेहासिक्त आशीर्वाद ही रहा है। कुलदेवी दधिमथी की अनुकंपा से हमारे दाधीच वंश की यह बेल पुष्पित, पल्लवित और फलीभूत होती हुई, जीवन के श्रेष्ठ मार्ग मे आगे बढती रहे। इसी आकांक्षा, विश्वास एवं आप सभी के शुभ आशीर्वाद की कामना के साथ इस ''दधिमथी पुराण'' के प्रकाशन में आदिशक्ति परमेश्वरी माँ भगवती दधिमथी की कृपा के अत्तिरिक्त स्वर्गीय पर दादाजी एवं पर दादीजी श्रीमती सरजूबाई एवं श्री हजारीमल जी तिवारी का स्नेहासिक्त आशीर्वाद सदैव हमें इस पावन कार्य के लिये प्रेरित करता रहा है।

दिनेश कुमार तिवारी (एडवोकेट)
श्रीमती संगीता तिवारी

''सागर कुंज''
ए-50, चित्रकूट नगर, संस्कार स्कूल के सामने, सांगानेर रोड़
भीलवाड़ा (राज.)
मो.- 09414313853, 09413220297

श्री दधिमथी यंत्र
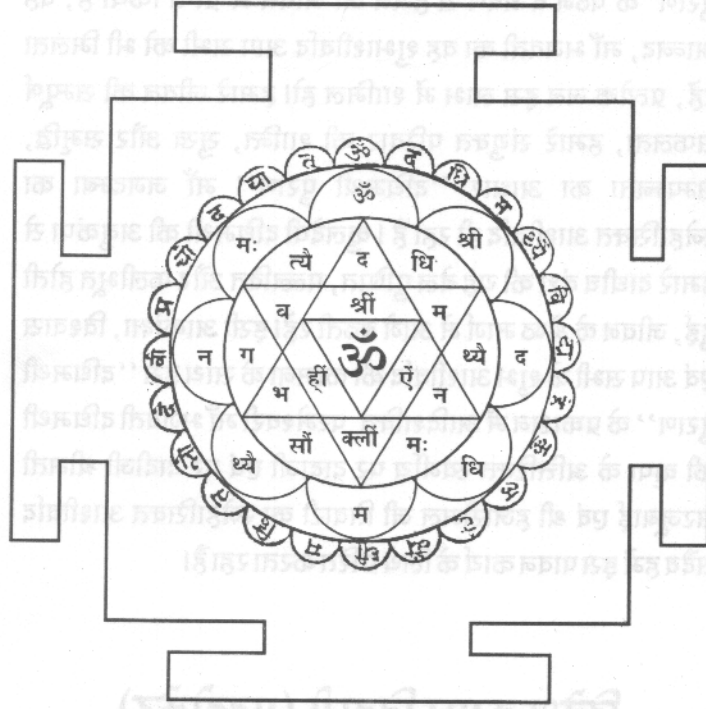
नवरात्री पर ''दधिमथी पुराण'' का
पाठ करना फलदायक है।

पहला अध्याय

संपूर्ण कामनाओं को पूर्ण करने वाली त्रिनेत्रा भगवती, जो हाथों में चमकीला (चपल) चक्र, तलवार, धनुष, बाण, अभय मुद्रा, कमल और त्रिशुल धारण किये हुए है और जो मोतियों का हार मुकुट और कुण्डल युक्त है, वह सिंहवाहिनी वर देने वाली सर्वोत्कृष्ठा, पूजने योग्य दधिमथी मंगल करें। गणेश, सरस्वती, पवित्र देवी दधिमथी तथा वेदवति पत्नीसहित दधीचि को नमस्कार करके जय का उचारण करें।

पार्वती ने पूछा -

हे देवाधिदेव महोदव! हे सदाशिव! मैं तुम्हे पूछती हूँ, हे स्वामिन् मेरा आपके साथ विवाह कैसे हुआ? मेरे पिता ने मुझे किसके कहने से आपको दिया। क्योंकि मैं आपकी अत्यन्त प्यारी हूँ, इसलिए यह मुझे विस्तार पूर्वक कहो।

शिव बाले -

हे देवी ! तूने ठीक पूछा। मैं तुम्हे रहस्य कहता हूँ। एकाचित होकर तू पूर्वजन्म की कथा सुन। राक्षसों से दु:खी देवताओं के तेज से उत्पन्न हो, उन राक्षसों को मार कर तू दक्ष के घर उत्पन्न हुई। पहले तू सती नाम से विख्यात थी। तूने पति की अवज्ञा में दु:खित होकर योगाग्नि से अपने शरीर को भस्मीभूत कर दिया और हिमालय के यहां जन्म लिया। उसके बाद तू बढ़ती हुई रूपराशि से भरी हुई युवती होने पर तप के लिए प्रवृत्त हुई। हिमालय तुझे तप करती हुई देख चिन्ता से व्याकुल हुआ। मेरे

प्राणों के समान प्यारी यह लडकी मैं किसे दूं। इस प्रकार चिन्तायुक्त होकर वशिष्ठ के आश्रम पर गया। वहाँ जाकर हिमालय ने हर्ष से मुनि को देखा। सद्गुरू उस ऋषि को हिमालय ने प्रणाम किया, तब प्रसन्न होकर महामुनि ने उसकी कुशल पूछी।

वशिष्ठ बोले -

महाभाग हिमालय! तुझे कौनसी बड़ी चिंता है। हे पर्वतों में श्रेष्ठ तू मुझे उसका कारण कह।

हिमालय ने कहा -

मैना के गर्भ से उत्पन्न रूपवती पुत्री पार्वती को देखकर मेरा मन व्यथित होता है कि यह कन्या किसको दी जाय।

वशिष्ठ बोले -

हे धर्मज्ञ सुन, कन्या के लिये उत्तम वर बतलाता हूं। दधीचि और नारद जिनकी सेवा करते हैं उन शंकर को उसे दो।

हिमालय ने कहा -

अथर्वा के पुत्र दधीचि भगवान, शिव की भक्ति में कैसे लगे। उनके प्रभाव को कहो तथा उनकी सेवा की विधि और उनका पराक्रम क्या है, यह भी बताओ।

वशिष्ठ बोले -

हे शैलराज! दधीचि मुनि की पवित्र, मंगल, उत्कृष्ठ, महानुभविता, उदारता सुनो, कहता हूँ। हे पर्वत! संसार के आदि के समय अनन्तासन पर हरि सोते है। उनके मन में विकार आने पर उनकी नाभि से कमल उत्पन्न हुआ। कमल से सम्पूर्ण संसार के बनाने वाले ब्रह्माजी उत्पन्न हुए। भरीचि आदि ऋषियों को देखकर ब्रह्मा ने उन्हे स्त्रियों से युक्त कर दिया (ब्रह्मा की इच्छा से

उनका विवाह हो गया)। उसके बाद अथर्वा को उत्पन्न करके शान्ति नाम की कन्या से विवाह कर दिया। कर्दम से नौ योगिनियाँ (कन्यायें) पैदा हुई, जिनका विवाह भी कर दिया।

अथर्वा के शान्ति से एक कन्या और एक पुत्र हुआ। कन्या का नाम नारायणी देवी पुत्र का नाम दधीचि था। हिमालय यह सब सुनकर फिर बोला, हे महर्षि ! नारायणी की शुभ कथा को फिर कहो।

वशिष्ठ बोले -

हे राजा (हिमालय) ! तूने संसार का कल्याण करने वाला शुभ प्रश्न पूछा। (वह) मूल प्रकृति (सबकी कारण भूत) ईश्वरी (समर्थ) आदि शक्ति है। सुनो। यह योगमाया महालक्ष्मी दाधीच कुल की रक्षा करने वाली नारायणी कही गई है। यह दधिमन्थन से उत्पन्न हुई, ऐसा प्रसिद्ध है। हे पर्वतराज ! उसी के पाप नष्ट करने और पुण्य बढ़ाने वाले माहात्म्य को कहता हूं। सावधान मन से सुनो। पहले भगवान नारायण से संसार को उत्पन्न करने वाले ब्रह्मा हुए। उनसे अथर्वा हुए, जिनकी कांति सूर्य के समान देदीप्यमान थी। हे पर्वत पहले स्वायम्भुव मनु की कन्या देवहूति से महर्षि कर्दम के योग से नौ कन्यायें हुई। कर्दम से देवहुति के गर्भ से शान्ति नाम की जो कन्या हुई उसे ब्रह्मा की आज्ञा से प्रेरित होकर मुनि ने अथर्वा को दिया।

महर्षि उनको ब्याह कर अपने आश्रम को गए और पुष्प तथा चन्दनों से युक्त सुख देने वाली शय्या करके। अपने आश्रम में उसके साथ नियम पूर्वक बहुत समय तक धर्म अर्थ को पालन करते हुए गृहस्थी धर्म की इच्छा वाले रमण करते रहे।

धर्मशास्त्र के अनुकूल पवित्र व्रत, सन्ध्या और अग्निहोत्रादि को हमेशा करते हुए पत्नी के साथ बहुत समय

बिताया, फिर भी वंशवद्धि के लिए पुत्र को प्राप्त न किया।

पुत्र की इच्छा रखने वाले वे अथर्वा बारबार चिन्ता करते हुए अत्यन्त दु:खके पार को नहीं पहुंचे, और इस प्रकार बोले - बिना सन्तति के मृत्युलोक में मेरा यह जीवन व्यर्थ है, धिक्कार योग्य है।

इस प्रकार अपने को तुच्छ मानकर दु:खित होते हुए ब्रह्मर्षि के पास पहले कहे हुए आश्रम में नारद पहुंचे। हृदय को प्रफुल्लित करने की इच्छा से नारद ने वीणा को बजाते हुए मुनि के उस अत्यन्त विस्तृत आश्रम को देखा। शाल, ताल, तमाल, विल्व, पाटल, कदम्ब, क्षीरपर्णी कुन्द, चम्पक और चन्दन उस आश्रम की शोभा बढ़ाते थे। अशोक, कोबिदार, नाग, नागकेसर, दाड़िम, बीजपूर, राजपूर से वह आश्रम युक्त था। पीपल, आंवला, बड़, गूलर, खजूर, नारियल, और अगूंरों की बेलों से वह आश्रम घिरा हुआ था। तुलसी, मालती, नीम, मोलसिरी, आम और आम के फलों से तथा और भी अनेक प्रकार के वृक्ष समूहों से एवं केले के वृक्षों से वह शोभित हो रहा था। हिरण, चीता, सुअर, सिंह, बन्दर, गीदड़, काला हिरण, चामरी गाय और खरगोश आदि से आश्रम व्याप्त था। (साही) बिलाव, मोर, जंगली हाथी, भेड़िये, कस्तूरिया हिरण तथा हथनियों से आश्रम मंडित था। बांबी से निकल कर बड़े बड़े सर्प बालकों के साथ प्रसन्नता और लीला के साथ क्रीड़ा करते थे। ऋषि के प्रभाव से सभी जन्तु प्रसन्न मन से वैरहीन हो गए थे और पक्षियों में तोता, मोर और कोयल हमेशा मंगल गीत गाते थे। वहां वन में पापों को नष्ट करने वाली नदी गंगा, जिसकी शोभा उज्ज्वल बालू के कणों से चारों ओर व्याप्त हो रही थी। गंगा कुमोदिनी, नीलकमल, लाल कमल, श्वेत कमल तथा जल में होने वाले अन्य सुगंधित पुष्पों से सुशोभित थी। हंस,

सारस, चकवा, बगुला, जलमुर्गाबी से (वह युक्त थी) और उसका किनारा गुंजार करते हुए मस्त भंवरों से शब्दायमान हो रहा था। अत्यन्त मनोहर गंगा, मछली, कछुआ, मगरमच्छ आदि जन्तुओं से तथा अन्य जलचर जीवों से युक्त और अगाध (अथाह) थी। वह रमणीय आश्रम शीतल मंद तथा सुगन्धित वायु के वेग से गिरे हुए फूलों से भरा हुआ था। देवी के कीर्त्तन में तत्पर महर्षि नारद का मन उस आश्रम को देखकर प्रेम में डूब गया।

इस प्रकार भी दधिमथी पुराण में गौरी शंकर संवाद में अथर्वण ऋषि का जन्म चरित वर्णन नामक प्रथम अध्याय समाप्त हुआ।

द्वितीय अध्याय

वशिष्ठ बोले -

महामुनि अथर्वा जटायुक्त पीत वस्त्रधारी नारद को आता देखकर सहसा प्रसन्न मन से सपत्नीक उठे। प्रणाम करके पहले अर्घपादिक से नारद की अर्चना की। उसके बाद श्रद्धापूर्वक उन्होंने उनको आसन दिया।

अथर्वा बोले -

आपके आने के कारण आज मेरा जन्म सफल हो गया। मेरी क्रियायें सफल हो गई और यह पवित्र आश्रम सफल हो गया। हे ब्रह्मपुत्र ! हे अखिलपापहर्ता ! हे परोपकारी ! हे करूणावतार ! हे स्वच्छन्दगामी भगवन् ! मुझ पर सुप्रसन्न होओ। मेरी रक्षा करो आपको नमस्कार है। अनेक तरह महर्षि अथर्वा और माता शान्ति के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर नारद आशीर्वादमय वाणी बोले।

नारद ने कहा -

हे महर्षि ! तुम्हारी कुशल हो । तुम चीरकालीन कल्याण, आयु और यश को प्राप्त हो । तुम्हारी सम्पत्ति अत्यधिक बढे और तुम्हारा कुल चिरंजीव हो।

मैं तेरे ऐश्वर्य को इन्द्रभवन से भी अधिक देखता हूँ। हे ब्रह्मन् तुम्हारी इस आश्रम की समृद्धि निरन्तर रहने वाली है । फिर भी तुम उदासीन क्यों हो ? तुम्हारे मन में क्या चिन्ता है ? जिससे तुम व्याकुल हो रहे हो और पीड़ा से व्याकुल की तरह दिखते हो।

अथर्वा बोले -

हे भगवन् ! तप और योग के प्रभाव से आप क्या नहीं जानते ? फिर भी अपने दुःखका कारणा कहता हूं। मेरे घर में कुबेर के समान सुख उपस्थित है, किन्तु निःसन्तान के मन में प्रसन्नता कैसे हो सकती है ? संतानहीनता के महान दुख से कुशल नहीं होता हम दोनो दम्पति हमेशा इस महा चिन्ता से दुःखित रहते है। पहले तपोवन में रहने वाले ऋषियों से पूछा कि किस दान और पुण्य से निःसन्तान को सुख हो। ऋषियों ने उत्तर दिया हे ब्राह्मण श्रेष्ठ ! सुनो, संतान देने वाले व्रत को कहते हैं । सत्य और धर्म का हमेशा आचरण करो। वेद में यह कहा गया है कि पूजा, तीर्थ और क्रिया आदियों से तथा यज्ञ, दान, तप एवं व्रतों से अपुत्र भी पुत्र को प्राप्त करता है । हे मुनि ! उनके वचन सुनकर मैंने यज्ञ किये । पहले पुत्रेष्टि और फिर विष्णु-यज्ञ किया। मैंने गाय और भूमि दान दी। इसी तरह कन्यादान भी किया और हाथी, घोड़ा, सोना, चांदी एवं विशेष रूप से विद्या दान किया। अनेक तरह के रत्न, मूंगा, मणि, मोती, हीरा आदि दिये । अन्न दान किया और गोरस भी बहुत दान दिया। हे

भगवान ! वेद-विहित व्रत धर्म से देवता और पितृ आदिकों को अर्ध्य, पाद्य आदि उपचारों से अनेक प्रकार से पूजा। इस तरह हमेशा धर्म-कार्य किये, फिर भी मेरा मनोरथ पूर्ण नहीं हुआ। संसार में पुत्र के बिना घर ही क्या है इस प्रकार से में पत्नी सहित चिंता किया करता हूं। देवता और पित्तर मेरे दिये हुए (स्वाहा और स्वधा) को स्वीकार नहीं करते। में पुत्रकष्ट से दुःखी हूँ। पृथ्वी पर मैनें व्यर्थ जन्म धारण किया। उत्तम ब्राह्मण मुझे निपूता जानकर पवित्र अन्न को कुत्सित समझकर नहीं खाते। (कुलीन) पुत्रहीन सभी दिन रात निन्दा करते हैं। कल्याण की इच्छा करनेवाले सवेरे उस का मुँह नहीं देखते। इस प्रकार मैं सदा अपमानित होता हूँ। पृथ्वी पर अन्य पुत्रहीनों की भी यही दशा है। अंत में मैं तुझे फिर कहता हूँ 'निन्दा से मरना सुखकर है'। मरने में थोड़ी देर का दुःख किन्तु चिंता से सदा सर्वदा का। इसलिये मैं कहाँ जाऊँ। बिना पुत्र के क्या करूं ? पुत्र के बिना में देवर्षियों तथा पित्तरों का ऋणी हो गया हूँ। इसलोक में अपयश पाकर परलोक में मेरे लिए नरक निश्चित है। पुत्रहीनता के महान् दुःख से मेरा मन शुभकार्य, स्वाध्याय और बगीचे में भी नहीं लगता है। यहां शुभ कर्म करते हुए भी पृथ्वी पर मेरी निन्दा होती है। निन्दा को न सहने के कारण क्या मैं विष पीलूं ? अथवा ऊँचे पर्वत से अपने को गिरा दूँ ? कि वाज्वलित अग्नि में प्रवेश कर जाऊँ। अथवा महासमुद्र में गिरकर आत्मघात करलूँ ? हे मुनि ! कहो शान्ति के लिए किस प्रकार शान्ति हो इसका गृह-धर्म ही निष्फल हो गया। सूर्य (गर्मी) से तपती हुई पृथ्वी को जैसे वर्षाऋतु शांत करती है, वैसे ही तब प्रेमवती शान्ति ने मुझको यह प्रिय वचन कहा था। हे ब्रह्मन्! चिंता को छोड़कर इस समय धैर्य धारण करो, उससे (चिंता से) उत्साह आदिक सभी गुण नष्ट होते हैं। शास्त्रों में यह बतलाया गया है ''आत्मघात मत

करो। उद्यम से सब कुछ सिद्ध होता है इसलिए हमेशा उसे करो''। ज्योतिषशास्त्र जानने वालों ने जाने मुझे किस प्रकार कहा था कि हे शान्ति तू सौभाग्यवती और पुत्रवती होगी। यह तत्त्वदर्शी ऋषियों ने पहले कहा था, वे सामुद्रिक शास्त्र जानने वाले थे उनका यह वचन झूठा कैसे हो ? इसलिए हे साधो तुम पुत्र की चिन्ता छोड़ दो और सज्जनों के वचन का आश्रय लेकर उद्योग करो। हे शांति! बार बार ''उद्योग करो'' यह तू कहती है ? क्या मेरे द्वारा पहले किये गए शुभ कार्यों को तू भूल गई है

हे ऋषि ! तुमने महान् पुण्यों को किया, फिर भी हे स्वामी मेरी कामना सुनो। तीर्थ करके सुपुत्र की प्राप्ति होती है, इसलिए हे कृति ! तुम तीर्थ करो। हे नारद ! शांति के प्रिय वचनों सुनकर मैं सपत्नीक पुष्कर क्षेत्र पहुँचा और स्नानादिक क्रियायें की। मैंने यज्ञ वाराह को प्रणाम करके, ब्रह्माजी के दर्शन किये और ब्राह्मणों को भोजन देकर गोदान से उन्हें संतुष्ट किया। विद्वान्-ब्राह्मणों को दक्षिणा देकर साथ ही भूमि दान दिया। इसके बाद मैं प्रयाग में गया। त्रिवेणी नाम के उत्तम (तीर्थ में)। स्नान कर अक्षय बट का ध्यान तथा महानदी (गंगा) की पूजा करके चित्रकूट पर्वत का दर्शन करता हुआ विन्ध्याचल पहुँचा। इसके बाद मैं पवित्र नैमिषारण्य क्षेत्र व अयोध्या में गया। सरयू में स्नान करके काशी की ओर चला। वहाँ उत्तर में बहने वाली भगवान् विष्णु के चरण कमलों से निकली हुई गंगा में स्नान करके, फिर गया में जाकर स्नान किया तथा पितरों को मैंने तर्पित किया। तदनन्तर सुन्दर जगन्नाथ पुरी को नमस्कार करके दक्षिण की ओर आया। सप्त गोदावरियों के दर्शन किये। अनन्तर कृष्णा और वेणा आदिक में स्नान किया। शिवपुत्र स्वामी कार्तिक की स्तुति करके श्री शैल पर्वत पर वेंकटेश्वर की स्तुति की। विष्णुक्षेत्र में रंगनाथजी के दर्शन किये और सुन्दर

तुंगभद्रा में स्नान किया। कावेरी, कृतमाला तथा ताम्रपर्णी आदि शुभ नदियों से सुशोभित ऐसे पवित्र मलयाचल के दर्शन करके कांचीपुरी को चला। तत्पश्चात् रामेश्वर की स्तुति करके कन्याकुमारी को गया। पवित्र भृगुक्षेत्र, कच्छ क्षेत्र (भड़ौंच) तथा नर्मदा एवं सिन्धु के संगम मे पहुँचा। अनन्तर भगवान वामन का ध्यान करे द्वारिका गया और वहां से गोमती में स्नान करता हुआ उज्जैन नगरी में आया। वहाँ पहले हरसिद्धी देवी फिर महा कालेश्वर को प्रणाम किया। पश्चात् मथुरा में आकर पवित्र एवं शुभ वृन्दावन के दर्शन किये। वहाँ मैंने यमुना के दर्शन करते हुए, उत्तम गिरिराज के दर्शन किये। कुरुक्षेत्र में भी मैं स्यमन्तक पंचकाख्य नामक कुण्ड में पहुंचा। वहां पर सूर्य की अर्ध्यादिक द्वारा पूजा करके मैंने स्वर्णदान दिया। ब्रह्मापुत्र, सिन्धु, शोण और शतद्रु से जो सुशोभित था। प्रहलाद से सेवित साक्षात् नरहरि क्षेत्र में पवित्र सरस्वती देखता हुआ हरिक्षेत्र को पहुँचा। गंडकी नदी के बीच ठहरी हुई चक्रतीर्थ में शिला को नमस्कार करके कनखल तीर्थ दर्शन करता हुआ हरिद्वार पहुँचा। और बदरी वन को जाते हुए केदार की पूजा करके प्रभु नारायण से तप और ज्ञान को सुनकर शुभ तीर्थों में भ्रमण करता हुआ मैं अपने आश्रम पर पहुँचा। इस प्रकार पवित्र तीर्थों में तप और व्रतों को करने पर भी आज सन्तति के मुख को देखने से उत्पन्न होने वाला सुख, जिस प्रकार शिवजी स्कन्द और गणेश से पाते है, मैं न पा सका हूँ। हे मुनीवर! जो कुछ आपने पहले पूछा उसका विस्तार-पूर्वक मैंने उत्तर दिया। जिस दु:ख से मै व्याकुल हूँ, उससे मेरी रक्षा करो।

नारद् बोले - हे महाभाग अथर्वा! तुम कल्याणमय हो, बहुत भाग्यवान हो, पुण्यवान् हो, सत्यप्रतिज्ञ हो और धर्म में परायण तथा दृढ हो। तुम गायत्री के ध्यान से सर्वज्ञ हो और

उसका मंत्र जाप करने वाले हो । ऋग्वेद यजु:, सामवेद के पारंगत हो और चौथे वेद के कारण प्रसिद्ध हो । हे विप्र तुम वेदमूर्ति हो, दयालु हो, श्रद्धालु हो, व्रती हो, गुणी हो, महायोगी हो, परमेष्ठी तथा जितेन्द्रिय हो। हे मुनी श्रेष्ठ तुम ब्रह्मज्ञाता हो। कल्याणकारी कार्यों के प्रमाण से ही सभी मनोरथों को पाकर सुख पाओगे। हे विप्र ! ब्रह्मा से जो मैंने पहले सुना था, उस मेरे सर्वस्व और गोपनीय उत्तम व्रत को तेरे आगे कहता हूँ। अत्यन्त प्रसिद्ध द्धिमथी का नवरात्र व्रत है उसे पुत्रार्थी शास्त्र विधान के अनुसार करें । द्धिमथी देवी का नवरात्र में कही हुई विधि से पूजन करने पर ही सब मनोरथ सिद्ध होते हैं। तुम उसे सपत्नीक करो।

तृतीय अध्याय

अथर्वा बोले - हे प्रभु (नारद) ! आपकी वाणी सुनने से मुझे आनन्द हो रहा है। मैं दधिमथी के व्रत के सम्बन्ध में फिर कुछ पूछना चाहता हूँ। हे ब्रह्मन ! यह उत्तम व्रत कब और किस दिन किया जाता है ? हे महामुनि ! इनकी विधि और माहात्म्य क्या है ? कहो।

नारद कहने लगे - मैं दर्शन करने की इच्छा से एक समय ब्रह्मलोक में गया और वहाँ कमल के आसन पर बैठे हुए ब्रह्माजी को देखा। मैने समस्त विधियों से ब्रह्माजी की पूजा की और साष्टांग प्रणाम करके उनकी प्रार्थना की। तब ब्रह्माजी ने मुझ से कहा।

ब्रह्मा ने कहा - हे प्राणों के समान प्यारे नारद ! यहाँ कैसे आये ? हे सुतश्रेष्ठ ! तुम्हारे आने का कारण सत्य सत्य कहो।

नारद बोले - अभी देखने की इच्छा से मैं मृत्यु लोक गया था। वहाँ मैंने सभी लोग तृष्णा से पीड़ित देखे। वह अनेक

मनोरथ, अनेक इच्छाओं को बार-बार चाहते हुए भयंकर कष्ट से युक्त तथा अनेक रोगों से घिरे हुए हैं। विद्या और गुण से युक्त सभ्य व्यक्ति धनहीन है और अपने कर्मों से पुत्र एवं स्त्री के अभाव से दुःखी हो रहे हैं। मृत्यु लोक के व्यक्ति मोह माया के वशीभूत है, मन्दभागी हैं, अनेक तरह के उपद्रवों से युक्त हैं। प्रायः उनका प्रायुष्य थोड़ा है और वे पुत्र की चिन्ता से चिन्तित हैं।

पुत्रहीन व्यक्ति दिन रात करूण पुकार करते हैं। हे स्वामिन्! प्राणी करूण एवं दुःखी स्वर से प्रार्थना कर रहे हैं। पुत्र दो, पुत्री दो, और मेरे लिए सम्पूर्ण सम्पत्तियाँ दो। पृथ्वी पर हमेशा मनुष्य इस प्रकार कहते रहते हैं। उनके अनेक वचन को सुनकर हे पिता! मैं पूछना चाहता हूँ। जिससे संतति उत्पन्न हो, जो सम्पत्ति को देने वाला हो और जो सम्पूर्ण बाधाओं को शांत करने वाला भी हो ऐसे उत्तम व्रत को मुझ से कहो।

ब्रह्मा बोले - हे पुत्र! संसार का उद्धार करने के लिए तुमने ठीक पूछा। भक्तों का दुःख दूर करने के लिए मैं तुझे उपाय बतलाता हूँ। दधिमथी के पापहारी और पुण्य बढ़ाने वाले रहस्यमयव्रत को (कहता हूं)। जिसके श्रवणमात्र से निश्चयपूर्वक कल्याण होता है। वह व्रत धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को देने वाला और लक्ष्मी प्रदान करने वाला है। हे नारद! तू दधिमथी के इस व्रत को सावधान मन से सुन। शरद् ऋतु के आश्विन मास के शुक्ल पक्ष की पवित्र तिथि प्रतिपदा से आरम्भ करके नौ दिन तक सपत्नीक करें। प्रत्येक मास में केवल पक्ष की अष्टमी की भी विशुद्ध आशय वाला व्रत इस प्रकार शुभव्रत को करे। ब्रह्म मुहूर्त्त में उठ कर देवी दधिमथी का ध्यान करें और अपने दैनिक कृत्यों को करके गणपति का स्मरण करें। सद्‌गुरू को नमस्कार करके पवित्र बुद्धिवाला गुरू, देवता और अग्नि समीप देवी के व्रत-विधान का नियम ले। ब्रह्मचर्य-पूर्वक धैर्य की

साधना करें। सत्य परायण हो, दयालु हो और अनेक बहुत दान दें। काम, क्रोध, मद, मोह, मान और मात्स तथा क्रोध एवं कपट के उत्पन्न करने वाले सभी कर्मों को छोड़ दें। परान्न को छोड़कर देवी के व्रत की दीक्षा लें। इस व्रत नियमों को धारण करने के बाद प्राणियों की हिंसा कभी भी न करें। यदि शक्ति हो तो नव रात्रि का उपवास करे और अशक्ति दुग्धाहार और इससे भी न रह सके तो हविष्यान्न ले। पवित्र स्थान पर, घर में, मंदिर में, बुद्धिमान मनुष्य मंडप बनाये कलश के ऊपर देवी की स्वर्णमयी मूर्ति बनाकर स्थापित करें। फिर वेद और तंत्र के विधान से देवी की पूजा करें। इसके बाद विधिपूर्वक पुराण का पठन तथा हवन करें। मूल घी मिली हुई खीर की अग्नि में आहुति दें। खीर से बलि देकर अवशिष्ट हवन कर समाप्ति करें। फिर ब्राह्मणों को भोजन कराकर (अनन्तर) आचार्य-पूजा करें। बहुत सी दक्षिणा देकर इष्ट बन्धुजनों और कुटुम्ब के साथ स्वयं भोजन करें। इस प्रकार विधान पूर्वक करने पर सम्पूर्ण कामनायें प्राप्त होती हैं और जो जो संसार में अत्यन्त प्रिय वस्तुएं है वे सभी मिलती है।

नारद बोले - हे ब्रह्मन्! दधिमथी देवी के जिस व्रत को आपने कहा उसका माहात्म्य और स्थान भी मुझे बतलाओ।

ब्रह्मा ने कहा - हे पुत्र! कापाल नामक क्षेत्र की महिमा सुनो उसके दर्शन मात्र से सारे पाप छूट जाते हैं। जहाँ देवी का कपाल शिवजी के हाथ से गिर पड़ा था। जो ब्रह्मस्वरूप, दिव्य, योगियों से ध्येय और सनातन है। महामाया का वह महाक्षेत्र पीठों में उत्तमोत्तम स्थान है और सब तीर्थों से श्रेष्ठ तथा सिद्धि देने वाला है। पुष्कर के उत्तर भाग में बत्तीस कोस पर महामाया का अतिशय पवित्र महाक्षेत्र है। वहाँ ब्रह्म-कपाल में विराजमान योगेशी, योग में तत्पर, सर्व स्वरूप वाली फिर भी निराकार रूप पराशक्ति देवी विराजती है। सम्पूर्ण संसार के कल्याण और भक्तों

की निर्भयता के लिए सर्व स्वरूप वाली, निराकार रुप पराशक्ति व्यवस्थित है। एकान्त स्थान में स्थित उस महावन में यह सुरेश्वरी करोड़ों ब्रह्माण्डों का स्वरूप धारण करने वाली यह महादेवी अकेली ही विराजती है। जो पुण्यात्मा द्धढवती (उसका) दर्शन करते है वे मनुष्य शीघ्र ही विपत्तियों से छूटकर सिद्धि को प्राप्त होते हैं। उस स्थान पर सात्त्विक भाव से जो ब्राह्मण नवरात्र व्रत का परमोत्सव करेंगे, वे परम पद को प्राप्त होंगे। स्त्रियां देवी के दर्शनमात्र से धन धान्य से युक्त, वैधव्य भय से रहित, और पति की प्यारी होंगी। महामाया की कृपा से रोगी रोग से निर्मुक्त होंगे, अंगहीन सुन्दर अंगवाले बन जायेंगे, इसमें कोई संदेह नहीं है। पुष्कर में रहने वालेवशिष्ठ आदिक महर्षियों के द्वारा वारानुक्रम से (नियत वारों में) देवी का पूजन किया जाता है। यह देवी ब्रह्मा, विष्णु तथा अन्य देवों से भी प्रार्थित होती है। नवरात्र आने पर महामुनि मार्कण्डेय देवी पूजा करते हैं और उन्ही की कृपा से वे दीर्घायु है। रविवार को वशिष्ठ ऋषि आदि माता के नाम से सरस्वतीकूट से सदैव पूजन करने आते है। हे नारद्! सोमवार को वामदेव ऋषि महामाया के नाम से लक्ष्मी-कूट से महादेवी को पूजने आते हैं। मंगलवार को कपिल मुनि भी स्वयं मूल-प्रकृति नाम से कालीकूट से हमेशा महादेवी को पूजने आते हैं। बुधवार को वह राजराजेश्वरी परादेवी तीनों कूटों से आने वाले सर्वदा अगस्त्य ऋषि द्वारा पूजी जाती हैं। बृहस्पतिवार को भी अथर्वा मुनि परा श्यामा नाम से हृदय के बीच स्थान उस शिवादेवी को पूजते हैं। और शुक्रवार को अंगिरा ऋषि शारदा नाम से ओंकार जप से देवी की पूजा स्थिरचित्त से करते हैं। शनिवार को अत्रिमुनि मालिनी नाम से मालिनी छन्द से कन्द, पुष्प, चन्दन द्वारा देवी की पूजा करते हैं। नवरात्र में मार्कण्डेय ऋषि नवदुर्गा नाम से महामाया का व्रत और पूजन करते हैं।

महारात्री (दीपमालिका) के दिन हे मुने ! भगवान् विष्णु महालक्ष्मी के साथ कल्पवृक्ष के नीचे बैठकर देवी का पूजन करते हैं। मोहरात्री (जन्माष्टमी) के दिन ब्रह्मा महासरस्वती के साथ चिन्तामणि प्रस्तर की शिला पर बैठकर इन्द्रियों को वश में कर देवी की पूजा करते हैं। कालरात्रि (शिवरात्रि) के दिन भगवान शिव महाकाली के साथ कामधेनु के सामने बैठकर पुण्य को बढ़ाने वाली इस देवी की पूजा करते हैं।

चतुर्थ अध्याय

नारद बोले - हे समस्त ज्ञानियों में श्रेष्ठ महायोगी ब्रह्मदेव ! महामाया को दधिमथी नाम कैसे प्राप्त हुआ ? हे देव ! मेरे हृदय में यह महान् आश्चर्य प्रतीत होता है। कृपया इस संशय को मिटाने के लिए आप कहिये। ब्रह्मा ने कहा-प्राचीन काल में महा बलवान् देवता तथा राक्षसों ने अमृत के लिए समुद्र को मथा और जब वे असमर्थ हुए। मेरी अनुमति से सब ने महामाया की स्तुति की। तब महामाया विराट रूप में प्रगट हुई। हजारों मुख, पैर और हाथवाली, हजार सूर्य के समान तेज वाली, मातृकाओं से पूजित देवी अति सुन्दर समुद्र के तीर पर प्रगट हुई। समस्त औषधियों को समुद्र में डालकर, क्षीर को दही (का समुद्र) बनाकर महादेवी ने अत्यन्त मन्थन किया और फिर उससे रत्न उत्पन्न हुए। तब देवता और देत्यों ने प्रसन्न होकर जगदम्बिका की स्तुति की उस दिन से यह संसार में ''दधिमथी'' नाम से प्रसिद्ध हुई। मैंने (ब्रह्मा) शिव, विष्णु तथा दूसरे मुनि लोगों ने महामाया की स्तुति की, उसको, (नारद) यथावत् धारण कर (सुन)। ब्रह्मा बोले - जो सम्पूर्ण वेदों से किन्चित मात्र निषेध मुख नाम से (नेति नेति नाम से) जानी जाती है। (जो) योगीन्द्र सनकादिकों के शम दम आदि उपायों से हमेशा ध्यान की जाती है। आत्मज्ञानी जनों से अपनी आत्मा के तुल्य जानने से (जो)

परा एवं शान्त ज्योति (मानी जाती है) वह दधिमथी माता हमारे इष्ट सिद्धि के लिए नित्य प्रकाशित रहे। शिव बोले - पहले भगवती का रूप निर्गुण था, अनन्तर कपालात्मक हुआ। यह विराट स्वरूप ब्रह्मादिक देवताओं के द्वारा स्तुति किया गया। क्षीर समुद्र के मन्थन में भक्तों की एकमात्र रक्षिका भगवती दधिमथी का हजार हाथ, चरण और मुंह आदि से युक्त अत्यन्त रूचिर स्वरूप हमारी प्रसन्नता के लिए हो। विष्णु ने कहा - दधिसमुद्र मंथन में असफल और दुःखी देवताओं ने महान् कार्यों को करने वाली तुझको स्तुतियों से प्रार्थना करके ही अमृत प्राप्त किया। इसमें बुद्धिमानों के लिए कोई आश्चर्य की बात नही दिखती, क्योंकि तू मुक्ति के लिए एकमात्र चिन्तामणि है और हे पृथ्वी से उत्पन्न दधिमन्थिनि ! तुम्हारा सानिध्य (भक्ति) समस्त इच्छाओं को पूर्ण करने वाला है। देवता बोले - विश्व के निर्माण में जब ब्रह्मा किकर्तव्य विमूढ़ हुए, तब चिरकाल तक तुम्हारी स्तुति करके ही सृष्टि रचना की बुद्धि प्राप्त की। विष्णु ने भी संसार के पालने की बुद्धि तुम्हीं से पाई है। फिर संसार का नाश करने के लिए हे भगवति ! तुम दक्ष की कन्या के रूप में शिव की पत्नी हुई और वही तुम हमारी प्रार्थना से इस समय दधिमथी रूप में व्यक्त हुई। हे देवी ! तुम विश्व का सदा पालन करो। मुनिगण ने कहा - अत्यन्त उत्साह और परिश्रम से भी क्षीर समुद्र को मथने पर महर्षि कश्यप के पुत्र अमृत और अन्य रत्नों को न प्राप्त कर सके तब तुमने सारी औषधियों को समुद्र में डालकर मथवाया (जिससे रत्न प्राप्त हुए) तुम चौदह लोकों को ऐश्वर्य देने के लिए अवस्थित हो। मनुगण बोले - हे देवी ! तुमने महान और गंभीर अंधकार को दूर करके विश्व को प्रकाशित किया। इसके बाद तुमने देवता, राक्षस और मनुष्यों की सृष्टि की, जिनमें हम अंतिम है। सबसे छोटे पुत्रों में अधिक स्नेह होने के कारण तुम

हमारी रक्षा करो और पृथ्वी पर विराजमान होओ। वैसे तुम पूर्ण हो, तुम्हारा क्षीर-सागर के मन्थन से प्रयोजन की क्या था ? असुरगण कहने लगे - विष्णु आदि सभी देवता हमारे भाई है, इसलिए हमारे पूजनीय नहीं है। यह वृद्ध पितामह भी काम करने में हमारे समान नहीं। अतः पूजनीय भी नहीं, और भंयकर शरीरधारी रूद्र सामान्य अपराध ही क्रुद्ध हो जाता है (अतः यह पूजनीय कैसे हो) इसलिए हे भगवती ! केवल तुम्ही पूजने वालों की इच्छा को पूर्ण करने वाली शेष रहती हो। इस प्रकार सबसे स्तुति की हुई माहेश्वरी देवी प्रसन्न होकर बोली, हे कश्यप-पुत्रों! सब का हित करने वाला मेरा वचन सुनो। क्योंकि तुमने बल के अभिमान से गणेशजी, वास्तु पुरूष और मेरी मातृकागण की पूजा न की। और तुम लोग समुद्र मंथन में प्रवृत्त हुए, इसलिए तुम्हारा यह परिश्रम व्यर्थ हुआ। अतः ऐसा कभी न करना चाहिए। जो गणपति, वास्तुदेवता, षोडशमातृक और ग्रहों की पूजा न करके (कार्य में प्रवृत्त) होते हैं वे मूढ़ विघ्नबाधाओं से व्याकुल होकर असफल होते हैं। जो कुछ भी इष्ट और शुभकर्म हो वह सर्वदा इनकी पूजा करके करना चाहिए अन्यथा आसुर कहलाता है, यह मेरा विधान है। अब इन देवताओं की पूजा करके अमृत आदि को ग्रहण करो। यह कह कर देवी वहीं अन्तर्धान हो गई। नारद बोले - दधिमथी का वचन सुनकर गणदिकों की पूजा करके इन्द्रादिक देवताओं ने नवरात्रि का व्रत किया। दधिमथी की कृपा से समुद्र से उत्पन्न अमृत पीकर अजर और अमर बन गये तथा स्वर्ग को पुनः प्राप्त किया। हे अथर्वा ! इस प्रकार ब्रह्मऋषि ! भक्ति भाव से इसे शीघ्र आरम्भ करों। इस व्रत के प्रभाव से तुम श्रेष्ठ पुत्र को पाओगे और अखण्ड ऐश्वर्य को प्राप्त कर वंशवृद्धि का लाभ प्राप्त करोगें। वशिष्ठ कहने लगे - देवर्षि नारदमुनि अथर्वा से सत्कार का, माहात्म्य

सुनाकर वहीं अन्तर्धान हो गए।

पांचवा अध्याय

वशिष्ठ बोले - उसके बाद पुत्र की इच्छा रखने वाले अथर्वा - दम्पति ने भक्ति-पूर्वक नारद द्वारा कहीं हुई विधि से उत्तम व्रत को किया। उस व्रत के प्रभाव से आश्विन शुक्ल की पुण्य तिथि महाष्टमी के दिन मध्याहन के समय शुक्रवार को श्यामा प्रगट हुई। हजारों बिजलियों के समान देदीप्यमान देवी प्रकट हुई। उसके दर्शनमात्र से वे दम्पति अथर्वा और शांति प्रसन्न हो गए। दोनों ने प्रसन्नमन से सहसा उठकर देवी को नमस्कार किया और उत्तम स्तुति करने लगे। अथर्वा बोले - हे देवी! सत, रज और तम इन गुणों से तुम विश्व का सदा पालन करती हो एवं तुम अपने व्यक्त प्रभाव से विश्व की रचना तथा संहार करने वाली हो। योगी तुमको तेईस तत्त्वों में नहीं जानतें। ब्रह्मा, विष्णु, महेश तथा तपस्वी ऋषि लोग तुम्हे जानने में मोहित हो जाते हैं (तुम्हे जान नही पाते)। हे भक्तों को वर देने वाली महादेवी! तू प्रसन्न हो। मैं बार बार तुझ महाशक्ति शारदा को नमस्कार करता हूँ। वशिष्ठ बोले - हे हिममय पर्वतराज! इस प्रकार उनकी स्तुती कर सुनकर उन्हें शुभ आशीर्वाद देकर देवी फिर बोली। देवी ने कहा - हे ब्रह्मर्षि अथर्वा! तुमने नवरात्र व्रत किया है। उसके प्रभाव से मैं प्रसन्न हूं। अपने इच्छित वरदान को मांगो। वशिष्ठ बोले - उसके बाद देवी के वचन सुनकर महामुनि प्रसन्न हुए। अथर्वा हाथ जोड़कर नमस्कार करके ये वचन बोले। अथर्वा बोले - हे जगदम्बा देवी, यदि मुझ पर प्रसन्न हो तो मुझे पहले निश्चित किये हुए वरदान को दो। विद्यावान्, यशस्वी, सम्पूर्ण शास्त्रों की जानने वाला, दानी, शीलवान्, सत्यव्रती

तथा धर्मपरायण, दृढ़वती, कृतज्ञ तथा वंश की वृद्धि करने वाला और हमेशा तुम्हारी भक्ति में अनुरक्त ऐसे अत्यन्त सुन्दर पुत्र को मुझे दो। उसके इन वचनों को सुनकर पवित्र हास्य के साथ देवी बोली यद्यपि हे ब्रह्मन्! तूने दुर्लभ वस्तु मांगी है तथापि तुझे पुत्र देती हूँ। इस प्रकार देवी के वचन सुनकर शांति पति से बोली - तुमने पुत्र का वरदान प्राप्त किया, क्योंकि पुरूषों को पुत्र प्यारे होते हैं। हमेशा सब तरह से सुख पहुंचाने वाली कन्या स्त्रियों को प्यारी होती है, अतः मेरे लिए देवी से एक कन्या की फिर प्रार्थना करो। शान्ति के इस वचन सुनकर अथर्वा बोले (तुमने मेरे साथ) पवित्र नवरात्र व्रत में महान् परिश्रम किया है। पतिव्रत धर्म में तुम्हारी सेवा से मैं प्रसन्न हूँ इसलिये देवी की फिर प्रार्थना करता हूँ। वह इच्छाओं को पूर्ण करेगी। वह भाग्यशाली अथर्वा शान्ति को इस प्रकार आश्वासन देकर साष्टांग प्रणाम करके उत्तम स्तुति करने लगा। अनेक तरह से प्रार्थना करने पर वह परमेश्वरी प्रसन्न हुई और अत्यधिक दयार्द्र होकर माहेश्वरी बोली। हे ऋषि! तेरी भक्ति से मैं बार बार प्रसन्न हूँ। हे ब्रह्मर्षि! फिर भी जो चाहता है उस उत्तम वरदान को मांग ले। अथर्वा बोले -तेरे अमृत वचनों को सुनकर मेरे मनोरथ पूर्ण हुए। मुझे महान् आनन्द हुआ किन्तु शान्ति प्रसन्न न हुई। इसलिये कृपा करके हे देवी! तुम मुझे फिर वरदान दो। शान्ति को प्रसन्न करने के लिए तुम्हारे समान कन्या दो। देवी बोली - हे ऋषिश्रेष्ठ! सुनो मैं तेरे घर जन्म लूंगी। तेरी पुत्री बनुंगी और तुम्हारा इष्ट पूर्ण करूंगी। और दधि सागर में यह सार को ग्रहण करने वाला विकटासुर दैत्य रहता है उस दैत्य को पेट फाड़कर मारूंगी। सम्पूर्ण वस्तुओं का सार मैं तेरे हाथ में देती हूं। प्रसन्न होकर जाओ और पत्नी का संरक्षण करो। वशिष्ठ ने कहा - 'ऐसा ही होगा' यह प्रतिज्ञा करके (महर्षि अथर्वा ने) शान्ति को देखा। महर्षि के देखने से

शान्ति के गर्भ में देवी प्रविष्ठ हुई। समय पाकर बिजली के समान कान्तिवाली वह जगद्धात्री प्रगट हुई। अनन्तर वह दधिसमुद्र पर आई जहां वह महान् दानव था। वहां उसने समुद्र में प्रवेश करके विकटासुर के पेट को त्रिशूल से भेदकर उसकी आंते निकाल ली। प्रलय से उसकी आंतो में वस्तु-सार रखा हुआ था। अत: उसकी आंतो को लेकर ब्रह्मादिक देवताओं को दिया। उसके बाद विश्वकर्मा ने आंतों के उन सभी टुकड़ों को पीसा और चक्र से वस्तुसार को समस्त वस्तुओं में डाल दिया। अनन्तर विश्व के शांति प्राप्त करने पर ब्रह्मा जगदीश्वरी को संतुष्ट करने लगे। दधि-मन्थन के कारण हे देवी ! तू वह दधिमथी हो। विष्णु तेरे पति, अथर्वा मुनि तेरे पिता, तथा निरन्तर शिवभक्त ऋषि दधीचि तेरे भाई हैं। उसका हे देवी! तुम्हें सदा संरक्षण करना चाहिए। तुम सृष्टि का पालन तथा नाश करने वाली हो। तुम क्षमा हो, तुम धैर्य हो, शांति हो, कान्ति हो, संतोष हो, कर्मरूपा हो, बुद्धि हो, तुम स्वाहा हो, तुम स्वधा हो, लज्जा हो। हे परमेश्वरि ! प्रसन्न हो। अथर्वा के पुत्र दधीचि की आज से तुम कुल देवी हो। 'ऐसा ही होगा' यह प्रतिज्ञा करके देवी दधीचि के पास गई।

छठा अध्याय

हिमालय बोले - हे महर्षि ! विकटासुर को माता ने मारा, यह तो तुमने कहा, वह विकटासुर कौन था ? किस युग में हुआ था ? हे महर्षि ! देवी के अद्भुत पराक्रम को फिर कहो। मैं विस्तार से देवी की सम्पूर्ण लीलाओं को सुनना चाहता हूँ। वशिष्ठ ने कहा - हे पर्वत ! तूने देवी की लीलाओं के संबंध में ठीक पूछा। पहले विकटासुर के उत्पन्न होने की कथा सुन। हे राजन् ! पहले सतयुग में महाबली और शूरवीर विकटासुर आदि दैत्य के कुल में उत्पन्न हुआ था। महावीर्य, पराक्रमी उत्कट (उदंड), महाक्रोधी और देवता तथा राक्षसों के लिए कंटक स्वरूप वह

विकट नाम से प्रसिद्ध हुआ। एक बार विकटासुर महर्षि शुक्राचार्य के पास पहुँचा और राक्षसों के चरित्रों को सुनकर देवताओं को शत्रु मानने लगा। देवताओं को मारने और बल को बढ़ाने की इच्छा से तप करने के लिये वह दधिसागर पर पहुंचा। एक पांव पर खड़ा होकर आकाश की ओर दृष्टि करके निराहार रहते हुए अत्यन्त भयंकर तपस्या की। बहुत वर्षों तक तपस्या करके वह दिव्य तेजवान हो गया और जड़ चेतन संसार को अपने तेज से तपाता हुआ। देवताओं ने उस राक्षस की तपस्या भंग करने के लिए अप्सरायें भेजी और गन्धर्व तथा देव किन्नर भी गए। ऋतुऐं भी मन्द वायु से उसे वश में करने में समर्थ नहीं हुई। हाव-भाव तथा कटाक्षों से भी अप्सरायें उसे अधीन न बना सकी। कामदेव से सताये जाने पर भी, दुष्ट जन्तुओं के भय से भी तथा अनेक लोभ-प्रलोभों से भी वह वश में न किया जा सका। विकटासुर को तंग करते हुए उन्होंने उसे कँपा डाला, किन्तु इतने पर भी वे तप भंग करने में असमर्थ रहे, इसलिए ब्रह्मा के यहाँ गये। देवता शीश झुकाकर प्रणाम करके उत्तम स्तुति को करते हुए हाथ जोड़कर देवों के भी देव पितामह से यह बोले। देवता बोले - हे देव! दुष्ट दैत्य से कष्ट पाते हुए हम कैसे रहें। जब तक लोक नष्ट नहीं होते, तक तक तुम शांति का उपाय करो। इस प्रकार देवताओं तथा भृगु आदिक मुनियों से अवगत हुए। हंस पर विराजमान होकर ब्रह्मा दधिसागर पर वहां गए, जहाँ दैत्यराट था। ब्रह्मा ने भयंकर तथा घोर तपस्या में लगे हुए विकटासुर को देखा। और उसकी भक्ति से प्रसन्न होकर उससे इस प्रकार बोले। ब्रह्मा बोले हे दैत्य! तुमने धैर्य के साथ उपवास करते हुए बहुत वर्षों तक अन्न तथा जल को छोड़कर व्रत किया है। तेरे तप की सिद्धि हो गई। अब तू कष्ट मत कर। हे निष्पाप! तुझे मनोवांछित वर दूंगा, मांग ले। विकटासुर बोला - हे

देवदेवेश ! तुम्हारे लिए नमस्कार है। हे सत, रज, तम स्वरूप तुम्हारे लिए नमस्कार है। हे आद्यबीज ! तुम्हें नमस्कार है। वरदान देने वाले तुम्हे मैं नमस्कार करता हूँ। हे ब्रह्मन् ! अगर देने में समर्थ हो, तो मुझे अमर कर दो, मैं फिर तप नहीं करूँगा अन्यथा शीघ्र चले जाओ। ब्रह्मा बोले - मृत्यु तो मेरी भी निश्चित है, दूसरों की बात ही क्या है ? अमरता कहाँ है ? प्राणियों की मृत्यु तो निश्चित है। इसलिये हे दैत्येन्द्र ! मृत्यु को जीतने के लिये दीर्घ जीवन की साधना करो। दीर्घ जीवन को ही अमरता मानकर कोई दूसरा वर मांगो। विकटासुर बोला - कृपा पूर्वक मेरे इच्छित वर को हे ब्रह्मन्। यदि आप दे सकते हैं (तो) स्त्रियाँ अबला कही जाती है, उनसे मुझे भय नहीं। (परन्तु) जल, अग्नि, वायु, विष्णु, शिव, इन्द्र, वरूण, नाग, दानव, यक्ष, भीषण राक्षस तथा मनुष्यों से (जिनसे मुझे मृत्यु का भय है उनसे मेरे प्राणों की भली भांति रक्षा करो। सर्वत्र अभय देने वाले इस श्रेष्ठ वर को मैं माँगता हूँ। हे पितामह ! देवता और दानवों से दुर्जय तीनों लोकों का शासन मुझे दो। मेरी सर्वत्र विजय हो। हे दैत्य ! जो तूने माँगा, वह वर अत्यन्त दुर्लभ है पर तेरी महती तपस्या से मैं प्रसन्न हूँ। वर देता हूँ। तेरे लिये ऐसा ही हो। वशिष्ठ बोले - इस प्रकार उसको वर देकर असुर के द्वारा पूजे हुए सम्पूर्ण संसार का निर्माण करने वाले ब्रह्मा ब्रह्मलोक को गये। पहले देवताओं के डर से भागे हुए जो भयभीत राक्षस गुप्तरूप से (छिपकर) समुद्र में, गुफाओं में और पाताल में थे। (वे) ''ब्रह्मा से विकटासुर ने वरदान प्राप्त किया है,'' यह सुनकर इधर उधर से दैत्य-दानव और राक्षणगण आये। राक्षसों ने वहां आकर विकटासुर को देखा। ब्रह्मा के वरदान से उसका शरीर तपे हुए सोने के समान हो रहा था। अग्नि के समान प्रचण्ड, सूर्य तेज के समान देदीप्यमान और युद्ध विद्या में कुशल विकटासुर को

देखकर वे अत्यन्त प्रसन्न हुए। जय-जय बोलते हुए राक्षसों ने यह कहा, हे देव! आज्ञा करो तुम्हारे सेवक क्या करें? इस प्रकार विनय सुनकर अभिमान के साथ वह राक्षस शीघ्र ही देवताओं को नष्ट करने के लिये क्रोध से जाज्वल्यमान अत्यन्त उग्र दृष्टि से महाक्रोध के वशीभूत हो गया। भंयकर दाढ़ी वाला, भयंकर भृकुटी और मुखवाला, दाढ़ी-मूछों के बालों को खींचकर अपने दांतों को पीसता हुआ, फूंकार और चीत्कार करके बार बार गर्जता हुआ, दांतो से दांतो को बार बार पीसकर, हाथों को पृथ्वी पर पटक कर, विकटासुर ने महाभयंकर रूपधारण किया। महाक्रोध से अट्टहास और भीषण नाद को करके गुस्से से त्रिशूल लेकर राक्षसों से यह बोला। विकटासुर बोला - हे दानवों! दैत्यो! राक्षसी! निशावरी! सुनो अब तुम देवताओं को शीघ्र नष्ट करो। इस प्रकार स्वामी की आज्ञा को नम्रता पूर्वक ग्रहण करके वे राक्षस वैसे ही देवताओं को कुचलने को निकल पड़े।

सातवाँ अध्याय

जहाँ जहाँ श्रेष्ठ द्विज लोग वेद-धर्म में लगे हुए थे, सत्यवादी तपस्वीगण नित्य देवी की भक्ति में लीन थे। दैत्यगण उन सबका संहार करने लगे और बछड़ों के साथ गायों को मारने लगे। वर्ण और आश्रम के धर्म तथा शिव और विष्णु के मंदिर भी नष्ट कर दिये गए। दानवगण पृथ्वी पर उपद्रव करते हुए घुमते थे। लोगों को अत्यन्त भय देकर पृथ्वी को वश में किया। करोड़ों सैनिकों से अपना सेना-बल बनाकर लड़ने की इच्छा से वह दैत्यराज स्वर्गलोक में गया। वहाँ पहुँच कर उस दैत्य ने स्वर्ग को घेर लिया और नंदनवन को बुरी तरह नष्ट करने लगा। युद्ध की इच्छा से भयंकर सिंहनाद करते हुए दांतो को किटकिटाकर देवताओं को बुलाते हुए सैनिक गर्जने लगे। उस भयंकर गर्जना को सुनकर वे देवता व्याकुल हुए और शीघ्र गुरू के पास पहुँचे

तथा उन गुरू-श्रेष्ठ से पूछा। देवता बोले - हे बृहस्पति ! ब्रह्मन् ! हे देव सद्‌गुरू। सुनो। इस समय यह महाबलशाली विकटासुर आ गया। हे महाभाग ! हम क्या करें ? शत्रु कैसे हारें ? हमारा कल्याण कैसे हो? हे प्रभु ! शीघ्र कहो। गुरू बोले - ब्रह्मा से वरदान प्राप्त किया हुआ, राक्षस विकटासुर अजेय है। उसे हम कैसे जीत सकते हैं ? हे देवताओं ! प्राणों को व्यर्थ मत नष्ट करो। इस समय पुत्र और स्त्री की प्राण-रक्षा के लिए मेरे वचन सुनो। मैं भागने की बुद्धि को श्रेष्ठ उपाय मानता हूँ। हे देवताओं ! मेरी बात को मानकर आप भागकर यत्नपूर्वक प्राणों की रक्षा करो। इससे भविष्य में कल्याण को प्राप्त करोगे। वशिष्ठ बोले - गुरू के इन वचनों को सुनकर देवता लोग पुत्र और स्त्रियों को लेकर दौड़ते हुए हिमालय की गुफा में पहुँचे। उसके बाद विकटासुर ने अमरावती को जीत कर राक्षस को देवताओं के पद पर तथा सूर्य और चन्द्रमा के आसन पर भी क्रम से उन्हे नियुक्त करके। अपने तेज से देदीप्यमान स्वयं इन्द्रासन पर बैठा। अग्नि और वायु के कर्म भी वही करने लगा तथा जल का बरसाना भी उसी के हाथ में था। स्वर्ग का राजा होकर वह पाताल में गया। वहां नागों को तथा दसों दिशाओं के दिक्पालों को भी दल-सहित जीत लिया। उसके बाद उसको वश में करके वह दधिसागर में गया। वहाँ अत्यन्त सुन्दर चन्द्रावती नामकी नगरी बनाई। दरवाजों पर ध्वजा और नीली पीली तथा उत्तम चित्र विचित्र पताकाओं से वह नगरी सुशोभित थी। बाहर के द्वार पर तोरण बंधे हुए थे। परकोटे के कंगूरे सोने से अत्यन्त सुन्दर दिखते थे। और नाना प्रकार के वृक्षों से रास्ते तथा चौराहे शोभायमान थे। दीपक की सुगन्ध तथा धूपों से, फल, पुष्पों तथा घट आदिक से गृहद्वार शोभित हो रहे थे। तथा द्वारों पर मदमस्त हाथी झूम रहे थे। वह चन्द्रावती पुरी अत्यन्त भव्य थी। चारों ओर से सुन्दर थी। धन-धान्य से

परिपूर्ण थी। वहाँ अनेक प्रकार के व्यापार होते थे। ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, शूद्र तथा अन्य जातिवाले और राक्षस, दैत्य, दानव तथा निशाचर रहते थे। दैत्यराज के उस राज्य में अकाल होता ही न था। और महामारी आदि रोग कभी भी पीड़ित नहीं करते थे। दैत्यराज के शासन में कोई भी निर्धन नहीं होता था। प्रजा निर्भय तथा सुखी होकर रहती थी। वहाँ झरने झरते थे। बगीचे शोभा देते थे। दधिसागर में उस दैत्य ने महल बनवाया। वह विशाल और विस्तीर्ण था तथा रत्न से सुशोभित शिखरों तथा सैंकड़ो कलशों से आकाश को छता हुआ सा प्रतीत होता था। इस प्रकार सब समय सुख देने वाला वह सुन्दर महल दैत्य की कौशल - पूर्ण कला को प्रकट करता था। दैत्यराज विकटासुर सिंहासन पर आरूढ होकर राज्य कार्यों में लगा। और तीनों लोकों की राज्यलक्ष्मी को भोगने लगा। फिर भी वह कामी देवताओं को क्रोध से दुख देता था। तथा अधिक पाने की इच्छा से भयंकर पापों को करता था। अत्यन्त कठोर दण्ड से प्रजा का धन छीनता था। वह परस्त्री गामी था और जुआ खेलता था। वह हमेशा जीव-हिंसा करता, मद्य पीता, तथा अभक्ष्यभोजी हुआ और पापों में प्रवृत्त था। फिर भी उत्तम राज्य को बहुत वर्षों तक उसने भोगा। उससे दुःखित हुए देवता ब्रह्मा की शरण में पहुंचे। देवताओं ने आदर के साथ प्रणाम करके अपना सारा दुःख कहा (हे ब्रह्मन्!) विकटासुर से दुःखी हम शरणगतों की रक्षा करो। ब्रह्मा बोले - तुम्हारे भयंकर एवं दारूण दुख को मैं जानता हूँ। उस दैत्यराज को मैंने पहले वरदान दिया था। मैं वचन से बंधा हुआ हूँ। कैसे रक्षा करूँ ? अतः हे इन्द्रादिकों ! तुम सब कोई दूसरा उपाय करो। अनंतर वहाँ से चलकर देवता कैलाश पर्वत पर पहुँचे, जहाँ बड़ के पेड़ के पास बैठे हुए शिवजी को देखा। देवाधिदेव शिवजी को देखकर देवता प्रसन्न हुए और प्रणाम करके भगवान शंकर

की मनोहर स्तुति करने लगे। देवता बोले - हे शिव! हे शान्त! हे चन्द्रशेखर ! हे मृड ! हे नीलकण्ठ ! हे शंकर ! तुम्हारे लिए नमस्कार हो। राक्षसकुल में उत्पन्न विकटासुर ब्रह्मा के वर से उन्मत्त है और उससे हम दुःखी है। हे शरणागत-वत्सल दयालु देव! हम तुम्हारी शरण आये है। हे महेशान! हे मृत्युन्जय! रक्षा करो, रक्षा करो, तुम्हारे लिए नमस्कार है। इस प्रकार उनकी स्तुति सुन करके शिव बोले। आपके कहे हुए दुःख के कारण को इस समय मैंने पूरा समझ लिया। अगर असुर को मारने की इच्छा है तो मेरे साथ आओ। शिवजी के वचनों को सुनकर देवता विष्णुलोक को गए। वहाँ ठहरे हुए विष्णु को नमस्कार करके देवता स्तुति करने लगे। हे ऋषिकेश! हे पद्मनाभ! रक्षा करो, रक्षा करो, तुम्हारे लिये नमस्कार है। कोई ब्रह्मा से वरदान प्राप्त किया हुआ महाशक्तिशाली विकटासुर है। हे प्रभो! वर्तमान में हम उससे अनेक तरह से दुःखी है, इसलिए अब दैत्यों को नाश करने का उपाय शीघ्र कहो। विष्णु ने कहा- जब ब्रह्मा से वरदान प्राप्त किया था, तब माया से मोहित होने के कारण विकटासुर 'स्त्रियों से मुझे कुछ भी भय नहीं'' यह कहा था। अबलाओं से अभयता जानकर, पुरूषों से उसने अभय मांगा था। उस वरदान को मैं झूठा कैसे कर सकता हूं।आप लोग मेरी बात को मानकर अम्बिका की शरण में जाइये। वह योगमाया महालक्ष्मी अथर्वा के घर में उत्पन्न हुई है। तुम उसी की शरण जाओ। वही उस राक्षस को मारेगी। वह आदिशक्ति महामाया तुम्हारा कार्य करेगी।

आठवाँ अध्याय

वशिष्ठ बोले - विष्णु के इस प्रकार वचन सुनकर प्रसन्न होते हुए, देवता लोग शीघ्र ही महर्षि के आश्रम पर गए। पवित्र और सुन्दर ऋषि के आश्रम में पद्मासन पर प्रसन्नता से स्थित

देवी दधिमथी को देखकर सभी देवता मुग्ध हो गए। देवता लोगों ने हाथ जोड़कर साष्टांग नमस्कार किया। फिर पत्र, पुष्प और फलादि के द्वारा पूजन करने लगे। चावल, चन्दन, जल, धूप, दीप, सुगन्धित तथा अनेक प्रकार के नैवेद्यों से विधिपूर्वक (देवताओं ने देवी की) पूजा की। हे हिमालय ! प्रसन्न मन से देवता स्तुति करने लगे तथा अनेक बाजों के स्वरों में मंगल गीत गाने लगे। देवताओं ने कहा - हे महालक्ष्मी ! हे महामाया ! हे मूल प्रकृति ! हे आदिशक्ति ! हे पराम्बा ! दधिमथी तेरे लिए नमस्कार है। हे गुणस्वरूपे ! हे जगमाता ! हे ब्रह्म और ब्रह्माण्ड को बनाने वाली ! हे वैकुण्ठवासिनी ! दधिमथी माता तेरे लिए नमस्कार है। जब धर्म का नाश और अधर्म की वृद्धि होती है, तब अवतार ग्रहण करने वाली दधिमथी ! तेरे लिये नमस्कार हो। जो गौ, ब्राह्मण और देवतओं की रक्षा के लिये संसार में अवतार लेती है उस दधिमथी देवी के लिए हम झुकते है। उसे हमारा नमस्कार है। दधिसागर के मथने से वह तू दधिमथी देवी स्वयं प्रकट हुई। नित्यानन्द-घनस्वरूप हे दधिमथी ! तेरे लिए नमस्कार है। महासमुद्र से पैदा हुई, क्षीरसागर की पुत्री महालक्ष्मी नामवाली, दधिमथी तेरे लिए नमस्कार है। सागर मंथन से उत्पन्न अमृत को हम देवताओं के लिए आपने दिया, उस राजराजेश्वरी दधिमथी के लिए नमस्कार है। वे मधुकैटम मारे और पृथ्वी को पुष्ट किया, तब से जगदम्बा के नाम से प्रसिद्ध हे दधिमथी ! तेरे लिए नमस्कार है। पहले शुम्भ और निशुम्भ को जीतकर हमारी दुर्गति मिटाई और हमारी विपत्ति में रक्षा की। हे दधिमथी ! तेरे लिए नमस्कार है। पहले कोलासुर को मारकर तुमने लक्ष्मी नाम धारण किया और कन्याओं के धर्म की रक्षा की। हे दधिमथी ! तेरे लिए नमस्कार है। रक्तबीज को मारने के लिए तुमने काली संज्ञा धारण की। हे भद्रकाली ! हे महाकाली !

दधिमथी ! तेरे लिए नमस्कार है। जब तुमने चंड मुंड को मारा, तब से तू चंडी और चामुण्डा नाम से विख्यात हुई। हे दधिमथी ! तेरे लिए नमस्कार है। संसार को विजय देकर विजया नाम से अलंकृत हुई। हमें जय देने वाली दधिमथी देवी। तेरे लिये नमस्कार। अज्ञान रूपी अन्धकार को हर कर तुम महाविद्या नाम से प्रसिद्ध हुई। साक्षात् सरस्वती रूपा दधिमथी। तेरे लिये नमस्कार। जो तीनों लोकों में अव्यक्त, प्राणियों को शक्ति देने वाली सर्वत्र व्याप्त और सूक्ष्मस्वरूप है उस दधिमथी के लिए नमस्कार है। सावित्री, भारती, गौरी, गायत्री, राधिका, रमा, पतित तारिणी, लक्ष्मी, दधिमथी तेरे लिये नमस्कार है। हे मृगेन्द्र वाहिनी ! हे समस्त पापों का नाश करने वाली ! हे वर देने वाली, हे बुद्धि देनेवाली ! श्यामा ! हे दुष्ट शत्रुओं को नाश करने वाली ! तेरे लिए नमस्कार है। तुम ही सिद्धि देने वाली हो, तुम्ही गौरी हो, भुक्ति-मुक्ति देने वाली हो, स्थूल हो, सूक्ष्म हो, परा हो, अनन्त हो, रोद्र रूप हो, जय देने वाली हो। महाशक्ति, दधीमथी, परा, ब्रह्मस्वरूपा, रक्ताम्बरघरा, सुरूपवती, आभूषणों से अलंकृत, तुम ही वैष्णवी हो, रामा हो, संहार करने वाली हो, जगत को धारण करने वाली हो, नित्य हो, लोकों का कल्याण करने वाली हो। आज हम ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव से भी अनाश्रित हो गये हैं, (उन्होंने हमें सहारा नहीं दिया)। तुम्हारे अतिरिक्त त्रिलोकी में और कोई रक्षक नहीं हैं। हे ईश्वरी ! तेरे सेवक हम दुःखी होकर प्रार्थना करते हैं, क्योंकि वरदान पाया हुआ कोई यह विकटासुर उत्पन्न हो गया है। उसके दुःख से दुःखी होकर हम तेरी शरण में आये हैं। तुम शीघ्र राक्षस को मारो और हमारी विजय करो। हे चारों ओर आँख, सिर और मुंहवाली ! जो राक्षस मन, वचन और कर्म से प्राणियों को मारता है, उन सब दुष्टों को तुम मारो। हे महालक्ष्मी ! हमारी रक्षा करो, हम शरणागतों की

रक्षा करो। दुष्ट राक्षस के भय से हमारी रक्षा करो। हे दधिमथी! तेरे लिए नमस्कार है। धन, धान्य, पृथ्वी, धर्म, आयु, कीर्ति, यश, बल और अभीष्ट कार्य हमें दो। हे दधिमथी! तेरे लिए नमस्कार है। हमें पतिव्रता पत्नी दो और आज्ञाकारी पुत्र भी। हे मंगले। हमें मंगल दो। हे दधिमथी! तेरे लिये नमस्कार है। विषय और घोर दुख में, संग्राम में, शत्रु संकट होने पर, सब जगह हे जगदम्बा देवी! हमारी रक्षा कर। तेरे लिए नमस्कार है। दधिमथी तेरे लिए नमस्कार है। त्रिलोक-धारिणी तुम्हे हम नमस्कार करते हैं। विश्वेश्वरि! तुम्हे हमारा नमस्कार है। हे अथर्वा की कन्या तुम्हारे लिये हमारा नमस्कार है। संसार को आनन्द देने वाली हे विष्णुप्रिये! तुम्हारे लिये नमस्कार है। और दरिद्रय को नष्ट करने वाली माहेश्वरी! तुम्हारे लिये नमस्कार है। हे माता! तू ही माता है। तू ही श्रेष्ठ पिता है और तू ही धन सम्पत्ति तथा मनुष्यों के लिए संपूर्ण विद्याओं की करने वाली (देने वाली) है। हे माता! तू स्मृति, मेघा, दया, नित्या, भद्रा, पुष्टि, विष्णुमाया, महाशक्ति, शांति श्रद्धा और चेतना है। दिव्यशक्ति-स्वरूपा हे महालक्ष्मी! तुम्हे नमस्कार है। बार बार नमस्कार है। हे दधिमथी! तेरे लिये नमस्कार है। वशिष्ठ बोले - उसके बाद देवताओं की स्तुति सुनकर प्रसन्न हुई देवी विजयसूचक, सत्य और मधुर वचन बोली। श्री दधिमथी कहने लगी - तुम्हारे दुःख्र का कारण मैं पहले ही जानती हूँ। हे देवताओं! अब मत डरो और मेरे कल्याणकारी वचनों को सुनो। पाप कर्म में लगे हुए धर्म के शत्रुओं को मैं मारूँगी और गौ, ब्राह्मण तथा देवताओं को पीड़ा पहुँचाने वाले राक्षसों का वध करूँगी। तुम्हें हमेशा ऐश्वर्य और निष्कण्टक राज्य दूँगी। तुम्हारे शत्रुओं और उस विकटासुर को भी मारुंगी। इस समय दधिसागर पर जाओ। मैं भी शीघ्र आती हूँ। और युद्ध के मद से

अभिमानी उस विकटासुर को बुलाओ। इस प्रकार देवताओं के चले जाने पर देवी दधिमथी ने सिंह पर चढ़कर रण में अस्त्र शस्त्र धारण किये। उन देवताओं ने रण में ठहरी हुई देवी को प्रणाम किया और देवी ने प्रसन्न होकर उनके लिए अपना कवच दिया। यह अभेद्य कवच धारण करने वाले को जय देने वाला है। वे (देवता) उच्च स्वर से जय बोलते हुए, युद्ध के लिए प्रस्तुत हो गए।

नवमां अध्याय

हिमालय बोला - हे स्वामिन्! जय और सिद्धि देनेवाला तथा सदैव सम्पूर्ण मंगलों का करने वाला, जो कवच देवी ने देवताओं को दिया वह मुझ से कहो। वशिष्ठ बोले - ब्रह्मा ने, पूछनेपर नारद के लिए पहले जो कहा था, वह कवच मैं तुझे कहता हूँ। हे नृपश्रेष्ठ सुनो। नारद बोले - संसार का निर्माण करने वाले संसार के पितामाह चतुर्मुख देव ब्रह्मा तुम्हारे लिए नमस्कार है, नमस्कार है। गोपनीय ही नहीं, परन्तु परम गोपनीय प्राणी वर्ग का हित करने वाले, सब की रक्षा करने वाले, दिव्य तथा उत्तम कवच को कहो। ब्रह्मा बोले - अत्यन्त गुप्त, महागुप्त सिद्धान्त, सार से उत्पन्न कवच को मैं संसार की रक्षा करने के लिए कहता हूँ। पहले विकटासुर के साथ युद्ध होने पर देवासुर संग्राम में वह मांगलिक कवच देवी ने देवताओं के लिए दिया। दधिमथी का कवच सर्वत्र जय देनेवाला मंगल और लक्ष्मी करने वाला तथा दिव्य ज्ञान, बुद्धि और बल को देने वाला है। परम रहस्य से युक्त, पवित्र और मुक्ति देने वाला, दधिमथी का प्राचीन कवच हे पुत्र! तुम सुनो। (ऊँ वैदिक मंत्रों और कार्यों में पहले प्रणव उच्चारण किया जाता है) इस श्री महामाया दधिमथी के कवच के ब्रह्मा ऋषि है, अनुष्टुप छन्द है, महामाया देवता है। ह्रीं बीज है। क्लीं मंत्र है। श्रीं शक्ति है। (मैं) समस्त कामनाओं की

सिद्धि के लिए जप करता हूँ (विनियोग कह कर जल छोड़े) नोटः- षडंगन्यास, करन्यास तथा हृदयादिन्यास से रक्षा, श्रद्धा और तादात्म्य स्थापित करने के लिए अंग-प्रत्यंग स्पर्श किये जाते है। देवी की पूजा तीन तरह से होती है - यंत्र, मंत्र और तंत्र से। न्यासादि तान्त्रिक विधान है। तीनों विधान है। तीनों विधान जब एक साथ किये जाते हैं तो सिद्धि शीघ्र होती है। ब्रह्मऋषये नमः शिरसि (मस्तक स्पर्श करे)। अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे (मुख)। महामाया देवतायै नमः हृदि (हृदय)। ह्रीं बीजाय नमः नाभौ (नाभि)। क्लीं मंत्राय नमः गुह्ये (गुप्तांग) श्रीं शक्तये नमः सर्वांगे (समस्त शरीर)। मूलमंत्र - **ऊँ ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौं भगवत्यै दधिमथ्यै नमः** (देवी दधिमथी को नमस्कार कर जप करने का मुख्य मंत्र है) नोट-करन्यास के मंत्रों से हृदय आदि अंगों को स्पर्श करें। कन्यास-ह्रीं अंगुष्टाभ्यां नमः (अंगूठे स्पर्श करें)। श्री ऐं तर्जनीभ्यां नमः (तर्जनी अंगुलियाँ)। क्लीं सौं मध्यामाभ्यां नमः (मध्यमा अंगुलियां)। भगवतै अनामिकाभ्यां नमः (अनामिका अंगुलियां)। दधिमथ्यै कनिष्ठकाभ्यां नमः (कनिष्ठिका अंगुलियां)। नमः करतलकरपृष्ठाभ्यांम् नमः (दोनों हाथों की हथेलियां और फिर उनके पीछे के भाग) हृदयादिन्यास - ऊँ ह्रीं हृदयायनमः (हृदय स्पर्श करें)। श्रीं ऐं शिरसे स्वाहा (मस्तक)। क्लीं सौं शिखायें वषट् (शिखा)। भगवत्यै कवचाय हुम् (दोनों बाहू)। दधिमथ्यै नेत्रत्रयाय त्रौषट् (दोनों नैत्र और भ्रुवों के मध्य) नमः अस्त्राय फट् (दाहिने हाथ को सिर पर घुमाकर चुटकी तथा ताली बजावे)। श्री दधिमथी देवी का ध्यान - अपने हाथों में शंख, चक्र, तलवार, कमल, धनुष, बाण, अभयदायक मुद्रा को धारण किये हुए, सिंहारूढ़ा, कान्ति से देदीप्यमान, दया और अमृत की सागररूप, अभीष्ट देने वाली, रत्नाभूषण से

सुशोभित देवी भगवती दधिमथी जो परा माता है उसका ध्यान करें। ऊँ पूर्व में ह्रीं स्वरूपा देवी रक्षा करें और आग्नेय कोण में परमतेजस्विनी, दक्षिण में वैन्दवी रक्षा करे एवं नैऋत्य कोण में नादरूपिणी भगवती। पश्चिम में ऊँ स्वरूपा तथा वायव्य कोण में विश्वधारिणी रक्षा करें। उत्तर में ध्रुवा और ईशान कोण में ईश्वरी रक्षा करें। ऊर्ध्व दिशा में प्रकृति मेरी रक्षा करे एवं अधोदिशा में भुवनाधिपा। इस प्रकार सम्पूर्ण दिशाओं में महावागीश्वरी रमा मुझे रक्षित रखे। सम्मुख में महामाया, पृष्ठभाग में कलारूपा, वाम पार्श्व में ललिता तथा दक्षिण पार्श्व में वेदसंस्तुता देवी रक्षा करे। शिखा की एकाक्षरी, सिर की मोहिनी, श्यामा, भाल की नित्यानन्दघना, भ्रुवों की भारती रक्षा करें। भ्रुवों के मध्य की इतिहासा, नाक की स्वरात्मिका, दृष्टि के मध्य की सर्वरूपा और कानों की वशिता रक्षा करें। गालों की कलातीता, कर्णमूल की वैष्णवी, ऊपर के होठ की याजुषी एवं नीचे के होठ की शतंभरा रक्षा करें। मुख की वैनायिकी, जिव्हा की सरस्वती, दांतों की सुधा, और तालु की शताक्षरी रक्षा करें। कण्ठ की महाकाली, ठोडी की मंगला, गर्दन की मृत्युंजया, औश पृष्ठवंश (रीढ) की कुलांगना रक्षा करे। कंठ के बाहर जातवेदा, नली कुलदेवता, दोनों कंधों की निगमा और आगमा तथा दोनों भुजाओं की प्रभा और शुभा रक्षा करे। दोनों हाथों की गायत्री और सिद्धा तथा अंगुलियों की सर्वदा तथा क्षमा देविये, नखों की गोष्ठेश्वरी, तथा दोनों कांखों की ईशिता ऋचा रक्षा करे। स्तनों की हंसात्मिका हंसी तथा कुलकुण्डैकशायिनी देवी, हृदय की सुभगा, तथा उदर की सिन्धुमन्थिनी रक्षा करें। नाभि की त्रिबीजा और त्रिकुटा, गुह्यदेश की भी: और क्रमा, कटि की यशस्करी तथा जानुओं की प्राप्ति और मेघा रक्षा करे। लिंग की चतु:षष्टि, जांघो की तरूणविग्रहा, पिंडली की भूमिशिखा,

तथा टखनों की दिव्या हमेशा रक्षा करे। दोनों पैरों की परा भट्टारिका और सौरी तथा पादांगुलियों की उमा, अधोभाग (तलवा) की अणिमा और नखों की महिमा देवी रक्षा करे। केशों की हिरण्यकेशी और सर्वतोऽक्षिशिरोमुखी, रोमकूपों की स्मृति और ह्रीं, तथा मेरी त्वचा (चमड़ी) की व्याहृति देवी रक्षा करे। रक्त, मज्जा, वसा (चरबी) अस्थि और मांस की त्रयक्षरी देवी रक्षा करे। मेद की कामापुरी तथा पित्ता की गति देवी तथा मति देवी रक्षा करे। कफ की पुराण, पद्मकोषा, तथ चिन्तामणि रक्षा करे, संपूर्ण संधियों की सामा, सन्ध्या, समा, वेदी तथा स्वतन्त्रा देवी रक्षा करे। वीर्य को ऋतुजा और शैवी, छाया की मुक्तिदा रक्षा करे, और प्रज्ञा देवी बुद्धि और चित्त की एवं प्राज्ञा देवी अंहकार की रक्षा करे। प्राण, अपान, समान, उदान, प्राण, यश, कीर्ति एवं धन की महालक्ष्मी सर्वदा रक्षा करे। ब्रह्मादिकों की परामाता मेरे सत्य धर्म की रक्षा करें। मेरे गोत्रों की गोत्रा और पशुओं की अधोक्षजा देवी रक्षा करें। पुत्रों की दधिमथी रक्षा, पत्नी की भोगदा रक्षा करें। प्रातः काल भवात्मिका तथा दोपहर में अथर्वणा रक्षा करें। सांयकाल में वाणी और रमा, अर्द्धरात्रि में वरदा और शुभा, रात्रि में स्वयम्भवी रक्षा करे, दिन में चेतना रक्षा करे। मार्ग में माहेश्वरी देवी और चारों और सावित्री देवी रक्षा करें। और कवच से जो स्थान अरक्षित है, उस सबकी देवी राज-राजेश्वरी हमेशा रक्षा करे। हे पुत्र ! देवी का यह उत्तम कवच तेरे लिए कहा। यह दिव्य समस्त कामनाओं को देने वाला तथा त्रिलोकी में मंगल करने वाला है। कवच को धारणा करने वाला विद्वान निश्चयपूर्व धनवान हो जाता है और वह कुबेर के समान सौख्य को प्राप्त होता है, इसमें कोई संदेह नहीं। समस्त भू-मण्डल का राज्य प्राप्त होता है, उसका पुत्र सचरित्र होता है। मनोरमा भार्या की उसे प्राप्ति होती है तथा वह शीघ्र कल्याण को

प्राप्त करता है। इस कवच रूपी मंत्र से बंध्या स्त्री के अंग को कुशा से समार्जन करे (जल के छींटे दे) (इससे वह) निश्चयपूर्वक मनोहर गर्भ को धारण करती है। मारण, उच्चाटन, आकर्षण, स्तम्भन और मोहन कर्म में जो नित्य कवच का पाठ करता है, वह शीघ्र इष्टफल लाभ करता है। (देवी के इस कवच को धारण करने से) अकाल-मृत्यु की वेदना, दुःख, दारिद्रय, महामारी, कष्ट आदि, राज्ययक्ष्मा और विषमज्वर नष्ट हो जाते हैं। और भी अनेक तरह के रोग तथा बालग्रह, दुष्टग्रह आदि देवी के इस कवच को धारण करने से शमन हो जाते हैं। भूत, प्रेत, पिशाच, यक्ष, गन्धर्व, किन्नर, ब्रह्मराक्षस, वैताल, शाकिनी और डाकिनी कूष्माण्ड, राक्षस, हिंस्त्रग्रह, दुष्टग्रह और वक्रग्रह ये सभी इसी कवच के धारण करने से नष्ट हो जाते हैं। दधिमथी की कृपा से तेज, बल, यश, कीर्ति और देवी के चरण कमलों में भक्ति तथा अन्य सभी कामनाओं की प्राप्ति होती है।

दसवां अध्याय

वशिष्ठ बोले - उसके बाद देवी, देवताओं के साथ, सहसा द्वार पर पहुंची और युद्धकुशल देवताओं ने उस पुरी को चारों ओर से घेर लिया। करकमल में स्थित राजहंस के समान, श्वेत, शत्रुओं में भय उत्पन्न करने वाले शंख को देवी ने मुखारविन्द से बजाया। देवताओं के साथ देवी के वाहन सिंह मेघ-घटा की तरह अत्यन्त गर्जना की। उस समय तीनों लोकों में वह महाकोलाहल व्याप्त हो गया। तीनों लोक कांप उठे, पृथ्वी पर भुचाल आ गया, तथा सारी प्रजा और संपूर्ण प्राणी एवं राक्षस भयभीत हो गए। राक्षस व्याकुल होकर ''रक्षा करो, रक्षा करो'' कहने लगे और दैत्यराज विकटासुर से बार बार प्रार्थना करने लगे। हे नाथ! हे नाथ! हे प्रजानाथ! हे जनेश्वर, रक्षा करो, रक्षा करो। जो भय हमने कहीं नहीं देखा था, वह इस समय

उपस्थित हुआ है। आज आपका निर्बल जानकर देवता लोग पुरी को घेर कर घरों और बगीचों को भी तोड़ फोड़ रहें हैं। इसलिए हे नाथ ! तुम कृपा करके युद्ध के लिए तैयार हो जाओ और तुम शीघ्र ही शत्रुओं का नाश करो, क्योंकि जय तुम्हारे अधीन हैं। विकटासुर उनके अप्रिय वचन को सुनकर अत्यधिक क्रोधित हो दांत पीसने लगा। तत्काल त्रिशूल लेकर पैरों से पृथ्वी को कंपाता हुआ, आँखों से आग बरसाता हुआ, मध्यान्ह सूर्य के समान हो गया। विकटासुर बोला - हे सम्पूर्ण दानवों ! मंत्रियों ! और सभासदो ! सुनो, शीघ्र दूत को भेजो। यह कौन शत्रु आया है। स्वामी के यह वचन सुनकर बुद्धिमान मंत्रियों ने अपने में से एक अघोरासुर नामक मंत्री को आदर के साथ भेजा। और उस दूत ने निकल कर देवता का रूप धारण किया तथा (देवताओं की) सेना में घुसकर गुप्त रूप से फिरा। इन्द्रादिक देवताओं ने दूत को 'यह राक्षस है' जब जान लिया तब हाथ, पैर और मुक्कों से उसे पीटने लगे। अनन्तर अनेक तरह के क्लेश देकर नाग-फांस से उसे बांध लिया। और शीघ्र ही देवता उस दूत को देवी के सम्मुख ले आये। वहां हाथ जोड़कर इन्द्र बोले - यह कोई दैत्य हमारा भेद जानने को आया है। दुष्ट दैत्यों का नाश करने वाली माता ! क्या आज्ञा देती हो ? इन्द्र के वचन सुनकर माता राक्षस को लक्ष्य करके बोली। देवी ने कहा - हे दैत्य ! कैसे आये हो ? और क्या करने के लिए ? तुम्हारा व्यवसाय क्या है ? तुम्हे यहाँ किसने भेजा है ? मेरे आगे सत्य-सत्य कहो। दूत बोला-मंत्रियों से भेजा हुआ मैं विकटासुर का दूत हूँ। मेरा नाम अघोरासुर है। तेरा बल जानने को आया हूँ। हे सुरेश्वरी ! तेरी सेना के बल को देखने की इच्छा हैं। जब इन्द्रादिक देवताओं ने छल को जाना तब, अनेक प्रकार से मुझे मारा और अनेक कष्ट दिये तथा बांधकर आपके सम्मुख ले आये मैं दूत हूँ मुझे छोड़ दीजिए। दूत के इस

प्रकार के वचन सुनकर देवी ने उससे बोली कहा - हे दूत ! सुन, इस समय तेरा स्वामी काम में अन्धा हो रहा है। वह प्राणियों को भय देकर धन छीन रहा है। तथा सभी मनुष्यों को, साधुओं, गौओं, देवों और ब्राह्मणों को पीड़ित करता रहता है। उसनेस्त्रियों का पतिव्रत भंग किया। कन्याओं का कुमारित्व दूषित किया। इस दुःख से दुःखी देवता मेरी शरण में आये। तब लोक के कल्याण के लिए मैनं प्रतिज्ञा की कि अब विकटासुर तथा अन्य दुष्टों को निश्चय ही मारुंगी। धर्म का उद्धार करुंगी तथा पृथ्वी का भार हरुंगी। है। दूत। तू शीघ्र जा और मेरी बात (विकटासुर को) कह। तब यह कहकर देवी फिर देवताओं से बोली। धर्मशास्त्र में दूत को अवध्य कहते है। (अतःइसे) छोड़ दो, छोड़ दो। यह सुन हाथ जोड़ कर इन्द्र बोला-धर्मशास्त्रों में दूतों के लिए हल्का दंड लिखा है। जीत बिना उनका छोड़ना अच्छा नहीं। तब हुंकार करती हुई माता ने अपने सिंह को छोड़ा। महान् क्रोध से भरे हुए, प्रज्जवलित नेत्रों वाले तथा जिसके केश खड़े तथा जिह्वा लपलप कर रही थी, ऐसा वह सिंह दूत को खाने को तैयार हुआ। तब सिंह को गर्जता हुआ देखकर, भयातुर अधोरासुर अत्यन्त वेग से भागने का विचार करने लगा। तब सिंह से उसको पकड कर खाने लगा और उसकी नाक काट डाली। सिंह से पीड़ित होने पर वह बोला-रक्षा करो, रक्षा करो। हे महाकाली ! हे माता ! हे जगदीश्वरी ! तू रक्षा कर रक्षा कर ! तब देवी सिंह को यह बोली छोड़ दे-छोड़ दे। शीघ्र आदेश पाकर सिंह ने तत्काल असुर को छोड़ दिया। तब अन्तयन्त व्याकुल होकर, वह अधोरासुर स्वामी (विकटासुर) के पास गया। और वहां अत्यन्त ऊंचे स्वर से रोने लगा। हे स्वामी ! मैं तुम्हारा कार्य कभी नहीं करुंगा। दूत का विलाप सुनकर क्रोध से बेचैन नेत्रों वाला दांतों से दांतों को पीसता हुआ, शीघ्र वह वचन बोला। विकटासुर

बोला-हे दूत। तुझे किसने दुःख पहुंचाया ? तेरी नाक किसने चबाली? जिसने तेरी नाक काटी, उसके मैं प्राण हरूंगा। हे अघोर! सच सच कह, इस समय तुमको किसने कष्ट पहुंचाया है ? विधाता किससे असन्तुष्ट हुआ है? और कौन मंद बुद्धि बिना है? दूत बोला-हे स्वामिन्। मेरी बात सुनों। मैं। आपकी आज्ञा से गया। जब शत्रुओं की सेना देखने लगा, तब तुम्हारे शत्रुओं ने मुझे बांध लिया। मुझे बांधकर, जहां सिंह पर चढ़ी हुई अर्थवा मुनि की कन्या विराज-मान थी, वहां ले गए। मुझे देखकर देवी ने हुंकार किया, तब सिंह गर्जा और उसने मेरी नाक चबा डाली। यह मेरी दुर्गति का कारण है।

ग्यारहवाँ अध्याय

दूत बोला-हे राजन्! अब मैं तुमसें शीश नवाकर प्रार्थना करता हूं। इस समय युद्ध ठीक नहीं। देवी के पराक्रम को सुन लो। चौंसठ योगिनियां, बावन भैरव और तेंतीस करोड़ देवताओं की मैनें सेना देखी हे महाबल। और भी बहुत तरह की सेना मैनें देखी। इससे हे राजन्। यह ज्ञात होता है कि देवी को कोई भी नहीं जीतेगा। जब तक युद्ध में वह दैत्यों का नाश न करे, इसके पहले ही माता को तुम प्रसन्न करलो। हे स्वामिन्! दधिमथी के चरण-कमलों में भक्ति करो, जिससे निश्चित रूप में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष तुम्हारे लिए सिद्ध हो जावे। इस प्रकार दूत के न्याय-वचन सुन कर विकटासुर हित को अहित मानता हुआ क्रोधपूर्वक बोला। मैं स्त्रियों से भय मानता तब अथर्वा की कन्या से क्या? और बालिका दधिमथी से मेरे लिए भय क्यों मानूं ? वह बुद्धिहीन अबला पराक्रम को क्या जाने? मूर्ख इन्द्रादिकों के साथ वह मुझे कैसे जीत सकती है? केवल रूप को देखकर हे अघोर! अब मत डर। युद्ध में हमारे सामने वह चिरकाल तक ठहर ही नहीं सकती। तेरे बल से इन्द्रादिकों तथा देवताओं को भी

मारकर तब तीनों लोकों का निष्कष्टक राज्य भोगूंगा । हे अघोर! तुझे देवी के कपट रूप से नहीं डरना चाहिये। इसलिये इस समय तू शीघ्र ही युद्ध के लिए तैयार हो । राक्षसों की सेना को और अन्य शूरवीरों को भी तैयार करो। सारे राक्षस इन्द्रादिक देवताओं के साथ युद्ध करें । मैं उस देवी के साथ निश्चय ही भयंकर युद्ध करूंगा और उसको हराकर देवताओं को पीस डालूंगा। वशिष्ठ बोले - वह अघोरासुर विकटासुर से फिर कहने लगा कि मैं आपके बलाबल को जानकर, हित की कामना से विचारपूर्वक ही यह कहता हूं। अघोरासुर बोला - हे राजन् जीत और हार का मैनें ठीक तरह विचार किया है। यद्यपि फल देवाधीन हैं पुरूष उस में क्या करेगा? फिर भी तुम्हारी भलाई के लिये यह कल्याणकारक बात कहता हूँ। तुम स्वीकार करो ! निश्चय ही मंत्री (मैं) तुम्हारा शुभचिन्तक हुँ। यही मेरा धर्म है। तुम्हारे लिये हित की बात कहता हूँ। हे राजन! देवी दधिमथी को निश्चय ही तुम नहीं जानते, जिसको केवलमात्र स्त्री समझ कर तुम निर्भय हो। हे राजन! वह स्त्री नहीं। वह तो आदि शक्ति महेश्वरी है। मैंने ठीक ठीक समझा है। हे दैत्येन्द्र ! मैं सत्य कहता हूं। हे राजन ! सुनों। मैं यह कहता हूं। एक समय मैं वन में गया और तपोवन होने के कारण नारद भी वहां आए। हे नाथ ! मैंने उनसे पूछा, देवता क्या करते है? तब उन्होने जो बात कही, वह सचसच तुम्हे कहता हूं। वहीं अथर्वा के आश्रम में सभी देवता आए, जहां बैकुण्ठवासिनी साक्षात् देवी उत्पन्न हुई थी । वहां देवता आदिशक्ति देवी को नमस्कार करके प्रार्थना करने लगे और वह देवी प्रसन्न होकर देवताओं से बोली।अधर्म का उच्छेदन करने के लिये, गौ, ब्राह्मण का कल्याण करने के लिये और पृथ्वी का भार हरने के लिए मैं सतयुगादि में प्रकट होती हूँ। इस समय दैत्यों का नाश, तुम्हारी रक्षा तथा धर्म स्थापित करने के लिए अथर्वा के

यहां उत्पन्न हुई। देवताओं! तुम मत डरो। तुम्हें स्वर्ग का राज्य देती हूँ देवी का यह वचन सुनकर देवता प्रसन्न हो गए। (नारद, अघोरा सुर से कहते हैं) हे मंत्री! सत्य कहता हूँ देवी दधिमथी स्वयं राक्षसों का नाश करेगी, इसमें कोई संशय नहीं। यह कह कर वीणापाणि योगी नारद चले गए। हे नाथ! मैं सत्य कहता हूँ कभी भी युद्ध मत करो। हे स्वामिन्! सुनो जगद्धात्री, धर्म और कल्याणकारिणी महालक्ष्मी दधिमथी को, हे महीपति! तुम पूजो। अनन्त सुख की प्राप्ति के लिए देवी को बार बार स्मरण करो। यदि आप राज्यलक्ष्मी चाहते हैं, तो युद्ध मत करो, मत करो। दूत के वचन सुनकर क्रोधित वह विकटासुर भयानक रूप बनाकर अघोरासुर से इस प्रकार बोला। देवता, यक्ष, गन्धर्व तथा तीनों लोकों के सम्पूर्ण निवासी मेरे विरुद्ध युद्ध करे, तो भी मैं युद्ध को नहीं छोडूँगा।। हे महामूर्ख मंत्री ! तू नीतिशास्त्र नहीं जानता। मुझे धर्म क्या बतलाता है? तूने शास्त्र का भार वृथा ही धारण किया। तूने जो अत्यन्त कठोर वचने कहे हैं, उनसे तेरे मन में किसी प्रकार से प्राणनाश की शंका क्या नहीं होती ? दैत्यराज की वाणी सुनकर वह अत्यन्त चिन्तित हुआ और उस समय भयभीत होकर पीपल के पत्ते की तरह काँपने लगा। क्या करूँ कहाँ जाऊँ? कौन मुझे बचाएगा? मैं अपने प्राणों की कैसे रक्षा करूँ? अहो ! महाकष्ट प्राप्त हो गया है। विकटासुर उसको भयभीत देखकर थोड़ी देर चुप रहा और फिर उसके वचन को याद करके बोला। हे मंत्री ! तू ही मेरा भाई है। तू ही मेरा रक्षक है। तू ही मेरा गुरु है। तू मेरा धर्मो-पदेशक है। तू ही नीतिज्ञ है। तू ही बुद्धिमान है। तू ही मेरा प्यारा है और तू ही मेरा सुहृय है। तेरे ही धर्मोपदेश से निश्चय ही दधिमथी देवी साक्षात् विष्णु की माया है, यह तत्व मैंने जाना। हे मंत्री ! सुन, मेराक्या निश्चय है, सो कहता हूँ। यदि वह साक्षात् राजेश्वरी लोकमाता है, तो वह देवी

युद्ध में समर्थ है एवं मेरा वध करेगी और मैं सब पापों से रहित होकर देवीलोक को चला जाऊँगा। यदि देवी असमर्थ रहेगी तो मैं राज्य करूँगा। इसलिए दोनों तरह जय देने वाले युद्ध को मैं अवश्य करूँगा। अघोरा सुर विकटासुर कावचन सुनकर अपने घर गया और दैत्यराज भी तत्काल राजसभा में आया।

बारहवाँ अध्याय

वशिष्ठ बोले-उसके बाद सिंहासन पर बैठकर (विकटासुर) सैनिकों से बोला। हे वीर सैनिको! शीघ्र ही युद्ध करने के लिए तैयार हो जाओ। सेना को तैयार करो, हम देवी से लड़ेंगे और उस देवी को जीत कर इन्द्रादिक देवताओं को भी जीतेंगें। उसके बाद मैं सम्पूर्ण राज्य को दैत्यों के लिये सुख से दूँगा और खुद भोगूँगा। यह सुनकर वे वीर तथा युद्ध करने वाले सैनिक शीघ्र ही शस्त्र अस्त्र और वाहनों से युक्त होकर आ गए। दैत्यराज भी अत्यन्त ऊंचे हाथी पर तपे ताँबे के समान लाल और अत्यन्त चंचल नेत्रों को फाड़ता हुआ युद्ध में उपस्थित हुआ। उस भयानक दैत्यराज की भुजाएँ लम्बी, शरीर महान् तथा रक्त चन्दन लगा हुआ, विशाल ललाट था। काले लोहे से बनाया हुआ, सोने की क्रांति से सुशोभित, बिजली के समान चमकता हुआ उसका तीखा त्रिशुल शोभा देता था। पर्वत की चोटी के समान आकृतिवाला और सौ धनुषों के बराबर ऊँचा और ग्रीष्म सूर्य के समान तेजस्वी था (उसमें) सौ गदा के समान भार था। ऐसे अत्यन्त भारी त्रिशूल को लेकर दैत्यराज अत्यन्त वेग से युद्ध के लिए जब चला, तब युद्ध भेरियाँ बजवाई। तब दैत्यराज का बायाँ अंग अकस्मात् फड़का और उसने अपने सामने शुक्राचार्य, राहु और अघोरासुर को देखा। गुरू को प्रणाम करके उसने सेना के द्वारा राहु और अघोर को सामने से हटा दिया। फिर दैत्यराज के मुकुट के अग्रभाग पर भयंकर गिद्ध बैठा। यह मृत्यु

को बताने वाला अशुभ शकुन हुआ। उसका मुकुट पृथ्वी पर गिर पड़ा और वह स्वयं हाथी से फिसल पड़ा। कौए, बाज, गीध, सफेद चील तथा और हिंसक पक्षी कतार बाँधकर दैत्यराज की ध्वजा पर टूट पड़े। मार्ग में प्रचण्ड हवा के बबूले उठने लगे। और सहसा तीक्ष्ण वायु चलने तथा धूल उड़ने लगी। पर्वत और वृक्ष सभी जड़ सहित कांप उठे। पृथ्वी पर गिर गए और टूट गए एवं पृथ्वी भी कांप उठी। हाथी पर चढ़ा हुआ, वह दैत्यराज अपनी सेना में गरजने लगा। अकस्मात् उसकी बाँई भुजा बाई आंख फिर भी फड़की। उसका स्वर भंग हो गया, मन कांपने लगा, चारों और देखते हुऐ उसकी आंखों में आंसू भर आये। उसका सिर रोगाक्रान्त हो गया, किन्तु वह मोह के कारण लौटा नहीं। रोंगटे खड़े करने वाले महान् उत्पातों को वहां देखकर वह दैत्य सभी राक्षसों को हंसता हुआ यों बोला, भयंकर दिखने वाले इन सभी भीषण और उग्र उत्पातों को जानकर भी मैं बलवान् देवताओं को दुर्बलों की तरह समझता हूँ। शिव, विष्णु तथा अन्य किसी देवता से मेरी मृत्यु नहीं है। इसलिए इस ब्राह्मण-कन्या से आज मैं क्यों करूं ? इस प्रकार कहता हुआ वह दैत्य अमंगलों की परवाह न करके सेना के साथ नि:शक उस युद्धभूमि में घुस गया। और वहां दिव्य शस्त्र तथा अस्त्र धारण किये हुए, सिंह पर चढ़ी हुई तथा देवताओं से घिरी हुई महादेवीको देखा। हे हिमालय ! दधिमथी को अत्यन्त क्रुद्ध देखकर, नि:शंक विकटासुर दुगुने क्रोध से त्रिशुल उठाकर बोला। विकटासुर बोला - मैं पुरुष हूँ और तू बुद्धिहीन अबला (स्त्री) दीखती है। हमारा तुम्हारा युद्ध धर्म-संयुक्त न होगा। वीर पुरुष कभी स्त्रियों को नहीं मारते, केवल उन्हें धमकाते हैं। स्त्री का वध नहीं करना चाहिए, यह धर्मशास्त्र में लिखा है। इसलिए मैं तुझे सचेत करता हूं हितकी कहता हूं। मेरे वचन को शुभ मानकर

एकाग्रचित से सुन। उद्योग - हीन, आनन्द रहित, नष्टवीर्य, गतपराक्रम, पराये सुख से संतप्त, दूसरे की सहायता की इच्छा रखने वाले, बुद्धिहीन, दीन, परद्वेष कुशल भाग्यहीन, निराश्रित देवता राज्य की इच्छा रखने वाले परन्तु युद्ध से भयभीत होने वाले हैं। ऐसे देवताओं की तुम रक्षिका कैसे हुई ? हे देवी! आप दूसरे के सिखाने से युद्ध में आई हो। मेरा शास्त्रोक्त वचन सुनों कि पराई सीख नष्ट करने वाली होती है। हे देवी! मैं तुझसे कहता हूँ यदि जीवित रहना चाहती है, तो युद्ध को छोड़ शीघ्र ही सुखपूर्वक कमलवन में चली जा। हे देवी ! यदि तू इस समय मेरी आज्ञा न मानेगी और हठ से युद्ध करेगी, तो शीघ्र ही मैं तेरे सौ टुकड़े कर दूंगा। और तुझे अत्यन्त कष्ट देने वाले स्थान यमपुर को भेज दूंगा। और तेरा रक्त मेरे सैनिक राक्षसों को पिला दूंगा। वशिष्ट बोले-राक्षस के उग्रवचन को सुनकर, उसने (देवी ने) बार बार अट्टहास किया और समुद्र-गर्जना के समान शंखध्वनि की। उसी तरह क्रोध से भरी हुई देवी राक्षसों को डराकर बराबार गर्जती हुई, विकटासुर से बोली। भगवती बोली-हे मूर्ख ! दुराचारी! निर्लज्ज ! दुष्ट!पापी ! महानीच ! ब्राह्मणों को कष्ट देने वाले ! तू निःशंक है, तू निर्भय है, तुझे धिक्कार है। इसलिए तू अब युद्ध में मेरी भुजाओं के बल को देख, क्षणभर में ही तुझे त्रिशूल से काटकर अनेक टुकड़े करके पृथ्वी के लिए तेरी बलि दूंगी। पक्षी तुझे खायेंगें। शृगाली तेरी आंत खींचेगी और कौवे तेरी आंख फोड़ेंगें। तूने मुझे कैसे कहा कि पुरूष स्त्री से नहीं लड़ते ? प्राचीन इतिहास जो हुआ वही तू मुझ से सुन। पहले भवानी का शुभ से, एकादशी का गुरू से, और महालक्ष्मी का कोलासुर से युद्ध हुआ था, सो प्रसिद्ध है। इसलिए मेरे साथ युद्ध करके तू पाप को न प्राप्त होगा। हे राक्षस विकटासुर ! यदि युद्ध में असमर्थ है, तो युद्ध का हठ छोड़कर

राज्य देवताओं को देदे। गौ, और ब्राह्मण के हित, तथा संसार के कल्याण के लिए यदि तू मेरा आदेश न मानेगा, तो निश्चय ही तेरे प्राण हरूँगी।

तेरहवां अध्याय

वशिष्ट बोले-(देवी के) उन धिक्कारयुक्त वचनों को सुनकर राक्षस विकटासुर भी क्रोध से अपने हित की बात न मानकर, अपने मन में सोचने लगा कि अब क्या करना चाहिए। यदि देवी के वचन से मैं युद्ध न करूं, तो कैसे भागूं ? मेरा भागना निन्दा फैलाने वाला होगा। यह न वीर के योग्य है और न धर्म-सम्मत ही। इस कारण से रणस्थित अम्बा के साथ मैं युद्ध करुंगा, क्योंकि अपने शरीर के उद्धार करने के लिए युद्ध का करना ही निश्चय करके परम उपयोगी है। इस प्रकार विचार करके उस विकटासुर ने बड़े जोर से शंख को बजाया और उसने सेना को आज्ञा दी एवं वीरों से कहा कि युद्ध करो। सभी वीर निशाचर स्वामी के उग्र वचन को सुनकर अत्यन्त हर्ष के साथ शीघ्र युद्ध करने लगे। दैत्य और दानवों ने शस्त्रों को उठाकर ऊंचे और घोर शब्दों को करते हुए, काटो, फाड़ो मारो यह कहते हुए देवताओं के साथ भीषण युद्ध किया। एक दूसरे को देखकर अत्यन्त क्रुद्ध हो निःशंक होकर एक दूसरे पर अस्त्र शस्त्र चलाने लगे। रथी रथी से, पैदल पैदल से, घुड़सवार से, हाथी-सवार हाथी सवार से परस्पर युद्ध करने लगे। अत्यन्त शोर करते हुए युद्धनीति से शून्य मतवाले राक्षसों ने देवताओं को महान् कष्ट दिया। हे हिमाचल ! इन्द्र भी उन मतवाले राक्षसों को देख और देवताओं में संकट देख अत्यन्त वेग वाले हाथी पर चढ़ कर, उसके बाद उस राक्षस सेना को तीक्ष्ण वज्र उठाकर मारने लगा और तीक्ष्ण बाणों से दैत्य सेना को काट डाला। इन्द्र ने दिव्य अस्त्रों से, शक्तियों से और खड्ग, चक्र, गदा आदिको के द्वारा

समस्त दानवों को छिन्न भिन्न कर दिया । इन्द्र की ऐसी शूरवीरता को राक्षस लोग न सह सके। फिर हिम्मत हारकर युद्ध को छोड़कर भाग गए। (असुरों को) भागता हुआ देखकर और अपनी सेना को भी चारों दिशाओं में गई देखकर दैत्य ने (विकटासुर ने) हंसकर लौट आने के लिए वचन कहे कि आओं और मेरे उत्तम वचन सुनों । कौन विद्वान इस प्रकार की परमेश्वर मृत्यु को नहीं चाहता है? जिससे इस संसार में यश प्राप्त होता है और परलोक में स्वर्ग मिलता हे । इस प्रकार धर्म और नीति से युक्त वचन वह बोला, किन्तु भयभीत राक्षसों ने नहीं माना और भाग गए । उस अनाथ दैत्य सेना को पीछे से मारता हुआ, देखकर विकटासुर क्रोध से फड़क उठा। दैत्यराज विकटासुर अत्यन्त शीघ्रता से देवताओं की सेना को हटाने लगा और अनेक निन्ध वाक्यों से उन्हें अपमानित करके बोला यदि हृदय से श्रद्धा और धैर्य है, तो प्राणो के मोह को छोड़ कर थोड़ी देर मेरे युद्ध को देखो इस प्रकार अपने क्रोध भरे वाक्यों को कह कर जोर से उसने त्रिशूल घुमाया तथा भीषण शब्द किया, जिससे देवता मुर्च्छित हो गए । फिर मदमस्त हाथी की तरह निडर विकटासुर भी अकस्मात् त्रिशूल उठाकर देवताओं को पांवों से कुचलने लगा। यह घृणित कर्म देखकर इन्द्र अत्यन्त क्रोधित हो गए और गदा को बहुत तेजी से घुमाकर, अत्यन्त वेग से दैत्यराज की छाती पर फेंकी। दैत्यराज ने हँसते हुए उसे बायें हाथ से पकड़ लिया । और शीध्र उसे अपने पराक्रम से घुमाकर दैत्यराज ने ऐरावत हाथी को मारा। उस गदा के प्रहार से ऐरावत हाथी का गंडस्थल क्षत-विक्षत हो गया और जिस तरह गेरूं के पहाड़ से जल गिरता है, उस तरह रूधिर गिरने लगा। फिर अति बलवान् इन्द्र भी बहुत क्रोधित हुआ और सौ धार वाले तेज वज्र को उठाकर घुमाने लगा । उसको घुमाता हुआ देखकर

विकटासुर क्रोध से भर गया और गदा को उठाकर वेग से बारबार घुमाने लगा। वज्र के लगने से पहले असुर ने हाथ की चतुराई से इन्द्र के बायें हाथ पर गदा मारी जिससे भुजा जर्जर हो गई और वज्र पृथ्वी पर गिर गया। उसको (इन्द्र को) देखकर देवता ऊँचे स्वर से अत्यधिक हाहाकार करने लगे। फिर वह दैत्यराज अत्यन्त क्रोध से प्रलय की अग्नि के समान त्रिशूल को उठाकर 'तू मरा हुआ हे' 'नष्ट है' इस तरह क्रोध से कहता हुआ इन्द्र को मारने के लिए दौड़ा। इन्द्र मारने के लिए भयानक दैत्य को आता हुआ देखकर देवता लोग भय से व्याकुल और बेचैन हो गए। स्वामी के कल्याण के लिए तथा संसार की मंगल कामना से इन्द्र की रक्षा के लिए देवता शीघ्र ही देवी शिवा की प्रार्थना करने लगे। हे महालक्ष्मी! रक्षा करो, रक्षा करो। हे सुरेश्वरी! इन्द्र को बचाओ बचाओ। राक्षस का शीघ्र नाश करो और आज हमें तुम विजय दो।

चौदहवाँ अध्याय

वशिष्ट बोले-देवताओं की प्रार्थना से शीघ्र ही देवी राक्षस के सामने आई और उसने इन्द्र की रक्षा के लिए बाण छोड़ा। उस बाण से दैत्यराज की उग्र शक्ति भी सहसा खंडित हो गई और उस चकित हुए दैत्यराज ने दधिमथी को सामने देखा। जिसके आठ हाथ शस्त्र-अस्त्रों से अत्यन्त भूषित थे, वह सिंह पर चढ़कर अत्यन्त हुंकार करती हुई, समुन्दर के समान गर्जना तथा भीषण अट्टहास करती हुई (देवी को देखकर) अरे यह कौन स्त्री मुझे दीख रही है? यों कहते हुए विकटासुर ने क्षण भर में ही 'यह दधिमथी है' यह निश्चय कर लिया और दैत्यराज अत्यन्त क्रोध के कारण दांतों से होठ को चबाता हुआ और वायव्यास्त्र आग्ने यास्त्र, वरुणास्त्र, ब्रह्मास्त्र, रूद्रास्त्र आदि अनेक शस्त्रों को मन से याद कर अम्बिका पर छोड़े। दैत्य के द्वारा आये हुए

शस्त्रों को जल्दी से टुकड़े करती हुई उस अम्बा ने अपने पराक्रम से उन सबको पृथ्वी पर गिरा दिया। और अनेक दिव्य शस्त्रों को सेना पर आठों हाथों से एक साथ जल्दी से जल्दी छोड़ने लगी। पृथ्वी पर सारे राक्षस रूधिर से लथपथ हो गए। देवी ने राक्षसों के साथ वहाँ महा भयंकर युद्ध किया। तब सेना का नाश देखकर अत्यन्त क्रोधित हुआ विकटासुर धनुष्टक्कार का शब्द करता हुआ बाण छोड़ने लगा। वह दैत्य देवी के द्वारा छोड़े हुए शस्त्रों को अपनी शक्ति से विफल करता हुआ देवताओं की सेना पर बाण शक्ति और फरसा फेंकने लगा। भालों, मोगरियों और तोपों के तीव्र प्रहार से दैत्यराज ने देवताओं की हाथियों, घोड़ों रथों और पैदल सेना को पीस डाला। देवताओं के छित्र शरीर से रक्त की धारायें बह चलीं और पृथ्वी उस रूधिर से सांयकालीन बादलों की तरह दीखने लगी। मरने से बचे हुए, भयभीत और शस्त्रों की चोट से व्याकुल, डरपोक सारे देवता युद्ध को छोड़-कर भाग गए। विकटासुर ने उन देवता लोगों का भागना देखकर, अटटहास के साथ हँसते हुए जोर से सिंहनाद किया। दैत्य ने टेढ़ी भौए करके, धनुष, बाण उठाकर सोने के पंखवाड़े सौ बाण छोड़े। दस बाण देवी के ललाट में, एक भू मध्य में, और दोनों भुजाओं पर आठ बाण मारे। हृदय में पांच बाण, दोनों बगलों में पांच पांच चरणों में चार और आठों भुजाओं में सात सात बाण मारे। और क्रोध में भरकर बाकी सब बाण भोंटे होकर पृथ्वी पर गिर पड़े। देवी के वैभव को देख और अपने पुरूषार्थ को विफल होता देखकर (विकटासुर) बहुत दुःखी हुआ और फिर उसने शस्त्र चलाये। तब देवी ने अपनी लीला से त्रिशूल की नोक को सामने करके दैत्य के चलाए हुए समस्त बाणों के अनेक टुकड़े कर दिये। विकटासुर ने बहुत जल्द ही स्वयं तलवार धारण की और वह क्रोध से लाल नेत्र करके सिंह को मारने के लिये आया। पीछे से उसकी

सेना भी आगे में, आगे में, इस प्रकार उग्रवचन कहती हुई, देवी को मारने के लिए चल पड़ी। महती सेना के साथ और अत्यन्त शक्ति भरे हुए उस विकटासुर को सिंह को मारने के लिए आता देखा। तब अत्यन्त क्रोधित देवी ने वाहन (सिंह) को बचाने के लिए और समस्त दैत्यों का नाश करने के लिए, अपने शरीर की ओर देखा। उसके (देवी के) शरीर से तत्काल ही अनेक शक्तियाँ निकलीं, जो अद्भुत और अनन्त रूपवाली समस्त देवी के समान हो गई। वे असंख्य तथा अनेक शस्त्रों को धारण की हुई, प्राय: वाहनों पर चढ़ी हुई, युद्ध में दुर्मद, समस्त शक्तियाँ। दधिमथी को नमस्कार करके युद्ध के लिए तैयार हुई और प्रसन्न होकर देवी ने उनको मेघ के समान गम्भीर वाणी में कहा। देवी ने कहा - हे शक्तियों ! तुम सब मेरे शरीर से निकली हो। हे बालाओ! सब मेरी आज्ञा से शीघ्र युद्ध करो और ब्राह्मण, गौ तथा देवताओं की रक्षा के लिए दुष्ट दानवों को मारो।

पन्द्रहवाँ अध्याय

वशिष्ट बोले-वे (शक्तियां) उस (देवी) की आज्ञा को मानकर, देवी की जय सुनकर दैत्य-सेना को मारने के लिए क्रम से चारों और दौड़ी। बड़े जोर से घुमा-घुमाकर तेज अस्त्रों को फैकती हुई, इनको 'मारो, मारो' इस प्रकार कोप से वचन बोली। शक्तियों का दैत्य-सेना के साथ घोर युद्ध हुआ। इधर दधिमथी ने शीघ्र ही दैत्य (विकटासुर) के साथ घोर युद्ध किया। देवी का वाहन सिंह भी (क्रोध से) अपने कंधे के बालों को कंपाता हुआ एकदम भीषण शब्द करके दैत्य सेना पर टूट पड़ा। उसने उन राक्षसों, दैत्यों तथा दानवों को नखों से चीर डाला, डाढ़ों से मार डाला और मुख से चबा डाला। और शक्तियों ने वहां रण में दैत्यों को काटकर गिरा दिया। किसी किसी को खग्ड की चोटों से विदीर्ण कर दिया और (वे) दो टुकड़े हो गए। किन्हीं का

गदाओं से चूर्ण कर दिया, कोई भालों से मारे गए। दूसरे दैत्य चक्रों से छिन्न-भिन्न होगए और कुछ त्रिशूल की मार से मारे गए। शक्तियों का पराक्रम देखकर बहुत से (दैत्य) अत्यन्त मूर्छित होगए और प्राणों को त्याग कर शीघ्र ही मृत्यु के वश में हो गए। शस्त्रों की चोट से बहुतसों के मस्तक फट गए और शीघ्र पके जामुन के फलों के समान पृथ्वी पर गिर पड़े। कटे हुए सिर वाले दैत्यों के धड़पृथ्वी पर उठ खड़े हुए। खग्डों को घुमाते हुए, वे बराबर नाच करने लगे। तलवार को हाथ में धारण कर, दिव्य शस्त्र और अस्त्रों से सुशोभित और अत्यन्त कोप से टेढ़ी भौंहों के मुखवाली शक्तियों, तत्काल दैत्यों को संबोधित करके युद्ध के लिए फिर बुलाती हुई, तेजी से कूदती हुई दानवों पर टूट पड़ीं। चमकदार तेज खग्डों को जल्दी ले लेकर और दैत्यों के शीश काट कर शक्तियां वहां अत्यन्त प्रसन्न हुई। फिर खेल में गेंद के समान मस्तकों को उछाल कर, आए हुए उन मस्तकों को अपनी लीला से (आसानी से) उन शक्तियों ने खड्गो से छेदन कर दिया। फिर बिना सिर के उत्तम देहों से रक्तपात हुआ। तब वहाँ शीघ्र ही कूष्माण्ड और भैरव आ गए। और क्षेत्रपाल, वैताल भूचर, खेचर, भूत, प्रेत, विशाल और अनेकों डाकिनी आदि ने। युद्ध में उन राक्षसों का अत्यन्त गरम रुधिर अपनी इच्छा से द्राक्षासव के समान पिया और व तृप्त होकर नाचे। हाथी घोड़े और राक्षसों की पैदल सेना अत्यधिक संख्या में मारी गई। युद्ध में उनके रुधिर की धारा नदी की तरह बह चली। उस भीषण नदी को देखकर सारे दैत्य भाग गए और तब अपनी विजय पाकर शक्तियाँ प्रसन्न हो उठी तदन्तर वे सभी शक्तियाँ देवी के समीप आई और महालक्ष्मी की पूजा करके सहसा बोलीं। आपकी कृपा से युद्ध में राक्षस मारे गए और हमारी जीत हुई। परमानन्द देने वाले इस हर्षमय वचन को सुनकर, फिर दधिमथी देवी मधुर

वचन बोली। युद्ध के धर्म कर्म में जो तुमने मेरी सहायता को, उसी से पृथ्वी पर तुम्हारी स्थायी कीर्ति होगी। कलियुग में लोग भक्ति से घर-घर में तुम्हारे अनेक तरह के स्थान बनाकर तुम्हारी पूजा करेंगें। अनेक प्रकार के उपहारों से त्यौहारों पर, पुण्य दिनों में, तुम्हारी प्रार्थना करेंगे और फिर कुल देवी के (मेरे) नामों को पढेंगे। अनेक नामों से आप कुल-देवियाँ होगी और तब शीघ्र ही आप शक्तियाँ सम्पूर्ण इच्छाओं को दोगी। इस प्रकार देवी के वरदान को सुनकर शक्तियाँ प्रसन्न हुई एवं तत्काल जय बोलती हुई, देवी में लीन हो गईं।

सोलहवाँ अध्याय

वशिष्ट बोले-देवी के उस ऐश्वर्य को देखकर वह दैत्यराज चकित हो गया और उसने क्षण भर देखा तथा क्षण भर विचार किया। अरे युद्ध में यह क्या हो गया? देवता लोगों के द्वारा दुर्जय मेरे सैनिक क्षणभर में सम्पूर्ण कैसे नष्ट हो गए? वह फिर शोक को त्याग कर और धीरज धारण करके सोचने लगा- देवी के साथ युद्ध करने से मुझे अभी श्रेय प्राप्त होगा'। (विकटासुर) बोला, हे देवी! तेरे द्वारा छल से सेना मारी गई और उसका फल, विषभक्षण की तरह, तू शीघ्र ही प्राप्त करेगी। इस प्रकार विवाद करते हुए उस (विकटासुर) ने तेज तथा अग्नि की ज्योति के समानअनेक बाणों को सिंह तथा देवी पर छोड़ा। शीघ्र ही देवी ने तत्क्षण उन्हें काट डाला। विकटासुर ने फिर सिंह के मस्तक पर बाण मारे। उन बाणों से आहत होकर सिंह अत्यन्त क्रोधित हो, वेग से उछल कर हाथी के मस्तक पर पहुंचा। उस भयंकर सिंह ने हाथों की पेट से हाथी के गण्डस्थलों पर प्रहार किया और तत्काल महावत को अपने भयंकर दाँतों और नखों से फाड डाला। उसी समय बढ़े हुए गुस्से में विकटासुर ने सिंह पर भाला मारा माता ने उस तीक्ष्ण भाले को तीव्र बाण से शीघ्र ही, हँसते हुए

टुकड़े टुकड़े कर दिया। और चक्र से कटा हुआ हाथी का डरावना सिर पृथ्वी पर गिर पड़ा। उसके मांस को अपनी जीभ से मनमाना खाता हुआ, रक्त पीकर सिंह गर्जने लगा। उसके बाद सिंह के द्वारा मारे जाने पर वहदैत्यराज पृथ्वी पर वेग से इस तरह गिर पड़ा, जैसे पहले पुण्य के क्षीण होने से इन्द्र पृथ्वी पर गिर पड़ा था। अनन्तर वह विकटासुर शीघ्र उठ, रथी पर चढ़कर, देवी पर अत्यन्त वेग से शस्त्रों को चलाने लगा। क्षण भर में देवी दधिमथी ने उसके सारे शस्त्रों को काट डाला। राक्षस ने भी अविलम्ब फिर तीक्ष्ण बाणों को छोड़ा। देवी ने अत्यन्त क्रुद्ध हो युद्ध में गर्जकर स्वयं ही शिलाओं को पीस डालने वाले बीस बाणों से दैत्य को काटा। एक बाण से धनुष को काटा और दूसरे से अस्त्रों को। आठ बाणों से वक्षःस्थल पर प्रहार किया तथा माता ने दो बाणों से दोनो हाथों को काट डाला। एक एक बाण से (चार बाणों से) चारों घोड़ों को और एक बाण से सारथी के मस्तक को काट डाला। शेष बाणों से उसके रथ तथा पताका को युद्ध में पीस डाला। उस टूटे रथ को देखकर दैत्यराज पृथ्वी पर आ गया और अस्त्र के साथ वेग से उछल कर आकाश में चिरकाल तक ठहरा रहा। उसको आकाश में उछलता देखकर देवी भी आकाश में उछल गई और विशाल मूसल से विकटासुर के हृदय पर प्रहार किया। तब उस चोट से दैत्य व्याकुल हो गया उसकी आँखें चलने लगी, शरीर घूमने लगा और वह दधिसमुद्र में गिर पड़ा। तब वह जगद्धात्री तत्काल दधिसमुद्र में गई और उस दैत्यराज के साथ भयंकर युद्ध किया। वहाँ महाक्रुद्ध विकटासुर बल से देवी पर शस्त्रों को फेंकने लगा। उस समय उसकी भयंकरता को देखकर देवता अत्यन्त भयभीत हो गए। 'हे अम्बा' ! तुम्हारी जय हो! 'दैत्यराज को मारो' यह देवताओं ने कहा। सब गुस्से में आकर देवी ने त्रिशूल को हाथ में लिया। फिर दैत्यराज को मारने की

इच्छा से त्रिशूल को आगे करके देवी ने सहसा फेंका। वृक्षों के साथ पर्वत टूट गए और पृथ्वी काँप उठी। उस समय दधिमथी ने उसके हृदय में त्रिशूल मारा। त्रिशूल की मार से दैत्यराज का शरीर घूम गया, आँखें फट गई, बाहु और जंघा कट गई और सिर इस तरह से गिरा जैसे इन्द्र के वज्र की मार से पर्वत। तब देवी ने त्रिशूल के द्वारा राक्षस के शरीर से वस्तुसार (चर्बी) युक्त आँतड़ियों को ले लिया। अनन्तर विजय पा कर समुद्र से उठती हुई वह इस प्रकार शोभित हुई जैसे समुद्र के मध्य से उगता हुआ रात्रि में चन्द्रमा। वह परामाता स्वर्ण के समान कान्तिवाली तथा दिव्य अठारह शक्तियों से युक्त थी। रत्नों की माला से उसका कंठदेश खिल रहा था और उसका शरीर उत्तम लाल रेशम के वस्त्र से शोभित था। सुगन्धित पुष्पों से सुशोभित कमलों के समान नेत्रवाली वह लक्ष्मी की तरह (समुद्र पर) उपस्थित हुई। और उसने अपनी विजय सुचित करने के लिए समुद्र की लहरों के शब्दों के समान शब्द वाले शंख को बजाया। हृदय में प्रसन्न होते हुए सभी देवता जय जय करने लगे और थोड़ी देर में माता भी समुद्र के किनारे शीघ्रता से उतरती हुई शोभित हुई। तब देवताओं ने अपनी विजय मानकर देवी दधिमथी की जयध्वनि की और अनेक प्रकार के पुष्पों की वर्षा की। स्वर्ग में दुन्दुभि बज उठी। चारों और अनेक तरह के बाजे बजने लगे। किन्नर ओर गन्धर्व गाने लगे और अप्सरायें नाचने लगीं। प्रसन्न मनवाले देवता अंजलि बांधकर कर करकमलों से प्रणाम करते हुए महेशानी की स्तुति करने लगे। देवता बोले -साकार स्वरूप, उत्तम गुणों से युक्त श्यामा को, तथा निराकारस्वरूप, निर्गुण (सत्, रज, तम तीनों गुणों से रहित), नित्य आनन्द करनेवाली, कल्याणकारी देवी दधिमथी को हम नमस्कार करते है। दधि से तुम पूजी जाती हो, दही से तुम प्रसन्न होती हो,

दधीचि को तुम वर देने वाली हो, दधीचि की इष्ट देवता हो, दधीचि को मुक्ति का सुख प्राप्त कराने वाली हो, दधीचि की दीनता को हरने वाली हो और दधीचि के भय को मिटाने वाली हो। दधीचि को भक्ति का सुख प्राप्त कराने वाली हो और दधीचि को गुण देने वाली हो। दधीचि मुनि द्वारा सेवा की हुई हो। दधीचि को ज्ञान देने वाली हो और दधीचि को गुण देने वाली हो। दधीचि के कुल की भूषण हो। दधीचि को मुक्ति और भक्ति देने वाली हो, दधीचि की कुलदेवी हो और दधीचि की कुल देवता हो। दधीचि की कुलगम्य हो। दधीचि के कुल से पूजित होती हो। दधीचि को सुख देने वाली हो। दधीचि का दैन्य हरनेवाली हो। दधीचि के दुःख को मिटाने वाली हो और दधीचि की कुल कीसुन्दरी हो। दधीचि के कुल में उत्पन्न हुई हो। दधीचि के कुल को पालने वाली हो। दधीचि के द्वारा दान से तुम प्राप्त हुई हो। दधीचि को दान के द्वारा सम्मान दिलाने वाली हो। दधीचि के दान से तुम्हीं सन्तुष्ट हुई थीं और तुम्हीं दधीचि की दान-देवता हो। दधीचि की जय से प्रसन्न होती हो। हृदय से दधीचि की तुम विजय चाहती हो। दधीचि के द्वारा जय प्राप्त्यर्थ पूजनीय हो और दधीचि की जपमाला हो। दधीचि के जय से सन्तुष्ट होने वाली हो। दधीचि को जय द्वारा तुष्टि देनेवाली हो। दधीचि के द्वारा तप से तुम आराध्य हो। दधीचि को शुभ देने वाली हो। तुम राजराजेश्वरी हो, हे लक्ष्मी! हमें आपकी भक्ति दो। हे दधिमथी! तुम्हारे लिए नमस्कार है। हमारी बुद्धि को निर्मल करो। अनन्तर शीघ्र सन्तुष्ट मन से स्तुति सुनकर वर देने वाली देवी मधुर स्वर से बोली। संसार का कल्याण करने के लिए हे सारे देवताओं ! सुनो, माघ शुक्ला महाअष्टमी के दिन चतुर्थ प्रहर में, संध्या-समय, पहली घड़ी में तथा शुक्रवार के दिन, जय प्रदान करने वाले शुभयोग में मैंने विकटासुर को मारा। यह पृथ्वी पर मेरे नाम से जयाष्टमी होगी।

जो मनुष्य मेरे जय के दिन उत्सव करेंगे उनके विघ्नों का नाश तथा शुभ होगा। वशिष्ठ बोले -अनन्तर देवी दधिमथी ने संसार के उपकार के लिए राक्षस की आँतड़ियों के टुकड़े ब्रह्मादिकों को दिये। उसके बाद विश्वकर्मा ने आँतों के सब टुकड़ों को पीसा और चक्र के द्वारा समस्त वस्तुओं में वस्तुसार को मिला दिया। तब सम्पूर्ण वस्तुएँ बलवती हो गई और उनके सेवन से देवता शीघ्र ही शक्ति-सम्पन्न हो गए। (देवी बोली) हे देवताओं! स्वर्ग का राज्य तुम्हें फिर देती हूँ। और समय समयपर याद करने पर तुम्हें संकटों से फिर मुक्त करूँगी। देवताओं को इस प्रकार कहकर उनके देखते हुए ही क्षणभर में महालक्ष्मी अन्तर्धान हो गई तथा महर्षि अथर्वा के आश्रम पर पहुँची। वे देवता अपने अधिकारों से निर्भय होकर पहले की तरह यज्ञ भाग को फिर से पाकर अत्यधिक आनन्द को प्राप्त हुए। विकटासुर के मारे जाने पर बचे हुए भयभीत राक्षस मृत्यु के डर से काँपते हुए शीघ्र ही पाताल को चले गए। भगवती दधिमथी की यह पुण्यलीला जो कहेंगे वे यश,पुण्य, आयु, धन और कल्याण प्राप्त करेंगे। देवी की लीला तथा विकटासुर की मृत्यु के इस चरित्र को जो मनुष्य पढ़ते हैं, वे मृत्युलोक में निश्चय ही सुखों को पाकर उस परमोत्तम पद (मोक्ष) को प्राप्त करते हैं।

सत्रहवाँ अध्याय

हिमालय बोला-हे ब्रह्मर्षि वशिष्ठ आपने दधिमथी के पराक्रमको ठीक तरह से कहा। देवी दधिमथि धन्य हैं और आपके दर्शन से मैं भी धन्य हूँ। हे ब्रह्मर्षि! मुझ से फिर कहो। शीघ्र मुझ पर कृपा करो। अब मैं दधीचि के उत्तम चरित्र को सुनना चाहता हूँ। वशिष्ट बोले-पहले ब्रह्मा के पुत्र बुद्धिमान् महर्षि अथर्वा ने पुत्र प्राप्ति की कामना से स्त्री के साथ गंगा के पवित्र किनारे पर आश्विन मास के नवरात्र में दधिमथी का व्रत किया। तब प्रसन्न

हुई वह लक्ष्मी अथर्वा से बोली। हे भद्र! तुम्हें जो चाहिए, वह शीघ्र मुझ से मांग लो। अथर्वा बोले। हे माता ! यदि प्रसन्न हो, तो मुझे गुणवान पुत्र दो।(देवी बोली) देवताओं का रक्षक, लक्ष्मी युक्त, दानवीर, दयासागर, वंशवृद्धि करने वाला श्रेष्ठ पुत्र तेरे होगा। (वशिष्ट बोल) - यह कहकर वह लक्ष्मी वहीं स्वयं अन्तर्धान हो गई। ठीक तरह विधि विधान से धर्म का पालन करते हुए समय पाकर शुभ मुहूर्त्त में महर्षि अथर्वा की पत्नी शान्ति ने महान् तेज से युक्त गर्भ को धारण किया। वह गर्भ शुक्लपक्ष के चन्द्रमा की तरह बढ़ने लगा। और पवित्र दशवें महीने में पूर्णता को प्राप्त हो गया। उसे परिपूर्ण देखकर अथर्वा और शान्ति प्रसन्न हुए। हे हिमालय। तो उसके पवित्र मांगलिक जन्म को सुन। भाद्रपद मास के शुक्लपक्ष की अष्टमी में रात्रि के बारह बजे शुभग्रहो के उदयकाल में शान्ति से अथर्वाजी के तेज से महान् तपस्वी दधीचि उत्पन्न हुए। उस समय छूने में सुख का अनुभव करानेवाली तथा सुख देने वाली वायु चलने लगी। गन्धर्व गाने लगे। देवताओं ने फूल बरसायें और ब्रह्मादिक सभी देवताओं ने मुनीश्वर की प्रशंसा की। ब्रह्मा बोले-लोक पितामह ब्रह्मा प्रसन्नता से बोले, हे पुत्र (अथर्वा)! सुन तेरे यह धर्मात्मा बालक हुआ है। यह ईश्वर का अंश है, दयालु है, देवता तथा ब्राह्मणों के हित के लिए इसके स्थूल शरीर में मैं ने सार (शक्ति) रख दिया है। यह सम्पूर्ण दैत्यों और राक्षसों को मारने वाला होगा यह दधि (ब्रह्म)कीपूजा करने वाला होने से इसका नाम दध्यड् होगा। अश्विनीकुमारों को पढ़ाने से यह 'अश्वशिरा' नाम से विख्यात होगा। जब तक संसार की स्थिति है, तब तक तेरा वंश स्थिर रहेगा। वशिष्ट बोले-तब ब्रह्मर्षि अथर्वा ने पुत्र जन्म का उत्सव किया और उसने रत्न, माणिक्य, मुक्ता आदि तथा बहुतसा सोना दिया। गोदान, भूमिदान और अन्नदान प्रसन्नता से माँगने वालों को दिया और

मधुर भोजन भी उत्तम ब्राह्मणों को दिया। वह बालक प्रतिदिन इस प्रकार बढ़ने लगा, जैसे कलाओं से चन्द्रमा बढ़ता है और संस्कार होने पर, तो वह विशेष रूप से शोभित हुआ, जैसे घिसने और तराशने से मणि शोभित होती है। अग्नि, सूर्य, विद्वानों गुरुओं और देवताओं के सामने विधिपूर्वक यज्ञोपवीत संस्कार ग्रहण कर ब्रह्मचर्य का विधिपूर्वक निर्वाह करते हुए दधीचि वेद पढ़ने के लिये चल पड़े। कमण्डल, दण्ड, यज्ञोपवीत, कौपीन, काले हिरण का चर्म, कुश -(डाभ) रूद्राक्ष, उत्तम मूंज की (कनगति) धारण करते हुए उन्होनें शीघ्र ही ऋग् यजु: और साम इन तीन वेदों को ब्रह्मा से पढ़ा। शास्त्र पढ़ने के बाद महर्षि दधीचि सरस्वती के किनारे तप करने को गए और बहुत वर्षो तक तप करने के बाद पार्वती के साथ शिव के, दर्शन किये। दधीचि से पूजित शिव उनसे बोले-हे ऋषीश्वर तुमने ब्रह्मचर्य ठीक तरह पाला है। मैं अत्यन्त प्रसन्न हूँ। इससे वरदान देता हूँ। हे ब्रह्मर्षि! तृण बिन्दु की कन्या से विवाह करो। जिससे तुम्हारे वंश वृद्धि कोकरने वाला उत्तम पुत्र हो और शीघ्र ही तुम निश्चय ही तीनों लोकों में यश पाओगे। दधीचि बोले-हे शिव! मैं आपका भक्त हूँ मुझे वरदान का लोभ मत दो। स्वभाव से ही आप संसार से बचाने वाले एवं सदाशिव हो और मेरे सेव्य हो। शिव बोले-हे ऋषि! मै तेरे चित्त में हमेंशा निवास करूंगा और तेरे मोह को हरूंगा औरशाश्वत ज्ञान दूंगा। हे ऋषि! अब तुम विवाह करके वंश की वृद्धि करो। सन्तान के बि ना यहां सुख और वहां स्वर्ग कैसे प्राप्त होगा? यह कहकर भगवान शिव पार्वती के साथ चले गए। तब यही निश्चय करके दधीचि विवाह को उत्तम मानकर कन्यादान लेने की इच्छा से राजर्षि तृणबिन्दु के घर गए। उन्हें आता हुआ देखकर राजर्षि ने विधिपूर्वक पूजा की। अत्यधिक आदर सत्कार कर फिर नमस्कार करके वे राजर्षि बोले। तुम्हारे दर्शन से मैं

धन्य हूँ। हे प्रभो! तुम्हारे लिए यह सारा राज्य भेंट करता हूँ और सुशील वेदज्ञ कन्या तुम्हें देता हूँ। हे ब्रह्मण! पूर्णतया तुम्हारे योग्य एवं हमेंशा गुणों का ग्रहण करने वाली, नाग से पवित्र वेद वती को कृपा कर ग्रहण करो। दधीचि बोले-विवाह बन्धन है फिर भी तुम्हारी इच्छा पूर्ति के लिये सुख से पाली हुई तुम्हारी कन्या को ग्रहण करूंगा। हे राजन्! तुम्हारी कन्या कोमल और अनेक प्रकार के सुखों के योग्य है। वह मेरे उस वन के घर में कैसे सुख पावेगी। दधीचि के वचन सुनकर राजा ने कन्या की ओर देखा। उस कन्या ने भी सहसा दृष्टि नीचे करली। उसके अभिप्राय को जान कर राजा उन मुनि से फिर बोला हे ब्रह्मन! सुनो यह कन्या मैने तप से पाई है। इसका अन्त:करण शुद्ध है। इसलिये हे प्रभो! तुम इसे स्वीकार करो। तुम्हारे अनुकूल होने से यह बन्धन न होगी। इस प्रकार राजा के वचन सुनकर ऋषि ने स्वीकार किया। तब मीन लग्न आने पर हस्त नामक नक्षत्र में राजा ने तीनों देवता (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) तथा बृहस्पति को ऋत्विज बनाकर शास्त्र के विधानानुसार अपनी कन्या दी। दधीचि ने ऋत्विजों को नमस्कार किया और क्रम से उन्होनें महर्षि को वरदान दिया। ब्रह्मा ने कहा, 'इस लोक में दम्पति (वेदवती तथा दधीचि) सुखी हो'। इसके बाद विष्णु इस प्रकार बोल, 'तुम्हारा वंश बढ़े'। भगवान् शंकर सहसा बोले, 'तुम्हारे ब्रह्मज्ञ पुत्र हो'। तब देव-गुरू पति पत्नी के प्रति येवचन बोले-'तुम्हारा सौभाग्य अखण्ड हो और सदैव सुख रहे'। राजा इस प्रकार आशीर्वादों को सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुआ और तब आचार्यों की पूजा करके उन्हें सोने की दक्षिणा दी। गुण-युकत महर्षि के लिए विधिपूर्वक कन्या देकर रानी के साथ राजा ने कन्या तथा दामाद के दर्शन से प्रसन्न मन हो प्रेमपूर्वक वस्त्र, भूषण, सुसज्जित शैय्या, अनेक प्रकार की घर में काम आने वाली सभी चीजें तथा गौएं महर्षि को

दीं। राजा योग्य दधीचि को कन्या देकर निश्चिन्त हुआ। तथा वे राजारानी अत्यन्त स्नेह से कन्या से मिले। तब रानी के साथ राजा विरह (कन्या विरह) न सहकर आंसू टपकाता हुआ, कन्या की चोटी को सीचने लगा। उनका गला भर आया। वे विह्वल हो गए, किन्तु धैर्य रखकर कन्या से बोले-तू हमेशा धर्म से अपने पति की सेवा करना। पति के आदेश का पालन करना पत्नी का पहला धर्म है। इस प्रकार आदेश देकर अच्छी तरह उन्होने पति पत्नी को विदा किया। अनेक बाजों को बजाते हुए अप्सरायें नाचने लगीं। देवता फूल बरसाने लगे और गन्धर्व तथा किन्नर नाचने लगे। जैसे विष्णु को महालक्ष्मी, शंकर को पार्वती, वैसे ही दधीचि को पत्नी वेदवती प्रिय हुई।

अठारहवां अध्याय

वशिष्ठ बोले-वेदवती को घर में लाकर तप की दीक्षा ले फिर हजार दिव्य वर्षो तक महान् तप किया। तब प्रसन्न हुए देव शिव ने निर्देश दिया। 'आदर से तुम देवी दधिमथी का तप करोगे। तब वह तुम पर सन्तुष्ट होकर वर देनेवाली होगी। हे महाभाग! वर पाकर तुम प्रसिद्ध होगे। वही तुम्हारे वंश की रक्षा के लिये कुलदेवी होगी। वह महामाया महेश्वरी तेरे से उपासित होने पर, पृथ्वी लोक पर सुप्रसिद्ध दधिमथी होगी और तेरे वंश के मनुष्य उसका आश्रय लेंगे। वे सब सुख, यश, विद्या, धन और बल पायेंगे। तुम्हारी भक्ति पवित्र और तुम्हारे पुत्र चिरजीवी हो। हे महाभाग! तुम गरीबों के रक्षक होओगे। तुम्हारे वंश का विच्छेद कभी भी नहींहोगा'। यह कह कर शिव अन्तर्धान हो गए और मुनि तप करने लगे। बहुत समय बीत जाने पर देवी प्रकट हुई। वह देवी प्रसन्न हो, अनेक वरदान देकर, अनन्तर शुभाशीर्वाद देकर स्वयं अन्तर्धान हो गई। अपने धर्म में परायण होकर मुनि, देवी की पूजा में संलग्न होकर निरन्तर भक्ति से पोडशाक्षर मंत्र

का जाप करने लगे। तब दधीचि ने अपने आश्रम में अतिथियों कीपूजा की। और सदा ब्राह्मणों को ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद पढ़ाने लगे। उसी समय स्वर्ग को जाते हुए सावधान नारद से मार्ग में अश्विनीकुमारों ने प्रणाम करके यह पूछा। 'इस समय संसार में ब्रह्मविद्या को जानने वाला कौन है? हे ब्रह्मर्षि! कृपा करके कहो। हमारे हृदय में जानने की इच्छा है'। नारद उनसे बोले, हे अश्विनी कुमारों! मेरे वचनों को सुनो। अथर्वा के पुत्र दधीचि (इस विद्या में) निपुण हैं। ब्रह्मविद्या के जानकार ओर प्रवर्गीय (मधुविद्या) के विशेषज्ञ हैं।

यह कहकर सामवेद के गाने वाले योगी नारद चले गये। दधीचि को ब्रह्मविद्या में और मधुविद्या में चतुर सुनकर दधीचि के पास आकर अश्विनीकुमार उनसे बोले। हे भगवन! हमें विद्या दो। यह सुनकर दधीचि बोले मैं आज अनुष्ठान में लीन हूं। फिर कहूंगा जाओ। उनके चले जाने पर चन्द्र ने आकर मुनि से कहा, वैद्य अश्विनी कुमारों को विद्या मत देना। अगर मेरे वाक्य को उल्लघंन करके उनको विद्या दोगे, तो शीघ्र ही तुम्हारा शिरच्छेद नि:संदेह हो जायेगा'। यह कहकर इन्द्र चला गया। इन्द्र के चले जाने पर अश्विनी कुमारों ने आकर महर्षि से कहा और उनके मुख से इन्द्र का कहा हुआ वचन सुनकर वे फिर बोले। हम दोनों पहले तुम्हारा सिंर काटकर घोड़े का सिर जोड़ देंगे। हे ब्रह्मर्षि! तब तुम उस सिर से हमें विद्या कहना। इन्द्र के द्वारा उस मस्तक के काटने पर फिर तुम्हारा मस्तक जोड़कर अपनी दक्षिणा आपको देकर जैसे आए हैं, वैसे ही चले जायेंगे। यह सुनकर अश्विनीकुमारों से सत्कार पाये हुये, असत्य से डरने वाले, अथर्वा के पुत्र दधीचि उनसे मधुविद्या तथा ब्रह्मविद्या कहने लगे। इन्द्र ने आकर अश्वशिरा मुनि को, अश्विनीकुमारों को पढ़ाता देखकर क्रोध से दधीचि का सिर काट दिया। फिर इन्द्र के

अन्तर्धान होने पर पढ़ते हुए उन दोनों अश्विनीकुमारों ने विधिपूर्वक पहले के मस्तक को ठीक तरह जोड़ दिया। वे दोनों ब्रह्म-विद्या को पढ़कर अत्यन्त प्रसन्न मन से हंसने हुए स्वच्छन्दता - पूर्वक (निर्भीक होकर) ठीक तरह (निर्विध्न) अपने घरको चले गए।

उन्नीसवां अध्याय

वशिष्ठ बोले-इधर त्वष्टानामक सूर्य के अग्निहोत्र से (अग्निकुण्ड में) वृत्रासुर उत्पन्न हुआ। उससे इन्द्र आदिक सभी देवता हृदय में अत्यन्त भयभीत हुए। वे दुःख से व्याकुल होकर विष्णु भगवान् के पास गये और उन्हे देख कर स्तुति करके नमस्कार किया। तब भगवान् नारायण शीघ्र प्रसन्न हुए और देवताओं के उस अभिप्राय को जानकर इंद्र से बोले। विष्णु भगवान बोले - इन्द्र! ऋषिश्रेष्ठ दधीचि के पास जाओ और उनके विद्या, व्रत तथा तप के प्रभाव से अत्यन्त वृद्ध उनके शरीर को मांगो। देर न करो। तुम्हारा कल्याण हो। हे देवराज! वह दधीचि विद्वान एवं ब्रह्मविद्या में पारंगत है। उन्होंने अश्विनीकुमारों को ब्रह्मविद्या दी। अश्व के सिर से ब्रह्मविद्या का उपदेश देने के कारण अश्वशिरा नाम से प्रसिद्ध हुए। और (उन दधीचि ने) उस अश्वशिरा नामवाली विद्या से अश्विनीकुमारों को अमरता दी। महर्षि दधीचि ने अभेद्य नारायण कवच त्वष्टा को दिया। और त्वष्टा ने विश्वरूप को दिया तथा उससे (विश्वरूप से) तुमने प्राप्त किया। तुम लोगों के तथा अश्विनीकुमारों के प्रार्थना करने पर वह धर्मज्ञ ऋषि हमारे लिए अपना शरीर दे देगा अनन्तर उनसे विश्वकर्मा के द्वारा बनाये हुए श्रेष्ट आयुध (वज्र) से। मेरे तेज से भरे हुए उस विकटासुर का सिर हिलाओगे और उसके मारे जाने पर तुम तेज, अस्त्र और आयुध से युक्त हो जाओगे। आप लोग फिर कल्याण प्राप्त करोगे। मेरे भक्तों को

कोई नहीं सता सकता। (वशिष्ठ बोले) इन्द्र को भगवान् विश्वम्भर इस प्रकार आदेश देकर। देवताओं के देखते-देखते वहीं अन्तर्धान हो गए। फिर विष्णु की आज्ञा से इन्द्रादिक देवता अस्थि मांगने के लिए शीघ्र ही दधीचि के आश्रम पर गए। महर्षि ने मन में इन्द्र का आना पहले ही जान लिया। यह सती राजकन्या मेरी सेवा में दत्तचित्त है। और मेरी पत्नी दुर्बल तथा कुशांगी है एवं पुत्रहीन भी। और पुत्र के बिना स्त्रियों के लिए और कोई फल सार्थक नहीं होता। यह सोचकर उन्होने अधोवस्त्र (धोती) में वीर्य रख दिया। और वह वीर्ययुक्त वस्त्र धोने के लिये स्त्री को दे दिया। और उस वस्त्र तथा कलश को लेकर सती स्नान करने के लिए गंगा पर आई। ऋतुवती पहले स्नान करने के लिए जघां के बराबर जल में गई। तब ही पार्वती के साथ महादेव आये। अपने इष्टदेव पंचमुखी समर्थ शिव की पत्नी के सहित-देखकर। ऋषि के धोने के वस्त्र को लज्जा के कारण शीघ्र ही लपेट लिया। और ऋषि के वस्त्र को लपेट कर गौरीशंकर को उसने प्रणाम किया। शिव कहने लगे- हे देवी ! ठीक है। हे शुभे ! तुम पुत्रवती हो। यह कहकर शिव अन्तर्धान हो गए। और वह फिर स्नान करने लगी। उस वस्त्र के साथ स्नान करने मात्र से ऋतुवती वेदवती ने ऋषि के अमोघवीर्य और अपने रज के योग से गर्भ धारण किया। गर्भवती वेदवती ने जल से निकलकर तर्पण किया।(इधर) सती के जाने के बाद इन्द्रादिक देवताओं ने प्रसन्नता के साथ आश्रम पर पहुँच कर अपना दुःख सुनाकर दीनता से विनय-पूर्वक अस्थियां मांगी। दधीचि बोले- हे देवताओं! शरीरधारियों को शरीर त्यागने में जो अचेत करने वाला दुःख होता है, उसको कदाचित् तुम नहीं जानते। मृत्यु की यातना अत्यन्त दुस्सह है। जिन सब जीवों को जीवित रहने की प्रबल इच्छा है, उनको शरीर ही अत्यन्त प्रिय और वांछित वस्तु है। साक्षात् विष्णु भी आकर

यह शरीर मांगे, तो भला बताओ उसे कौन देहधारी दे सकता है? देवता बोले-हे ब्रह्मन ! जो महापुरूष आपके समान प्राणीमात्र पर दया करने वाले हैं, एवं पुण्य कीर्तिवाले सज्जन, जिनके शुभ कर्मों की प्रशंसा किया करते हैं, वे पुरूष परोपकार के लिये क्या नहीं कर सकते? सत्य यह है कि स्वार्थ के वश साधारण लोग दूसरे के क्लेश को नहीं समझ सकते। यदि समझें तो (याचक पुरूष) तो मांगे नहीं और देनेवाला नटे नहीं राजा, वेश्या, यमराज, अग्नि, मेहमान, बालक, याचक (भिखारी) और आठवां ग्रामकण्टक ये दूसरे के दु:ख को नहीं जानते। दधीचि बोले- आपसे धर्म सुनने की इच्छा से (मैंने प्रत्यक्ष) आप लोगों को ऐसा उत्तर दिया था। यह आपके लिए प्रिय मेरे इस नष्ट होने वाले शरीर को छोड़ता हूं। हे देवताओं ! जो पुरूष इस नाशवान शरीर से धर्म का संचय नहीं करता है, न यश का ही, एवं प्राणियों पर दया भी नहीं करता, वह अचेतन सृष्टि से भी शोच्य (निरर्थक) है। जो व्यक्ति दूसरों के दु:ख और सुख से सुखी होता है। पवित्र यशवाले महात्माओं से इतना ही अव्यय (स्थिर) धर्म कहा गया है। संसार में धन, परिवार और शरीर सभी नाशवान एवं पराये है। इनसे मनुष्य जाने क्यों उपकार नहीं करता? उसकी कैसी दीनता है? अरे! यह कैसे कष्ट की बात है। वशिष्ट बोले-इस प्रकार निश्चय करके महर्षि अर्थवा के पुत्र दधीचि ने भगवान पर ब्रह्म में आत्मा को लगा कर शरीर छोड़ दिया। (उस समय) महर्षि दधीचि की इन्द्रियाँ, मन और बुद्धि संयमित थीं वे तत्व के जानने वाले थे। उनकी इन्द्रियों के बंधन टूट चुके थे और वे परम योग में स्थित थे, इसलिए उन्होने अपने जाते हुए शरीर को नहीं जाना। उसके बाद प्राणों को छोड़कर महर्षि ने इन्द्र को अस्थियां दे दीं। फिर इन्द्र ने उन्हीं अस्थियों से अस्त्र बनाकर असुर (वृत्रासुर) को मारा।

बीसवां अधयाय

वशिष्ठ बोले- इधर इन्द्र के चले जाने पर वेदवती जल में विधि को पूर्ण करके, देवता और ऋषियों के घड़े को जल से भर कर कमर पर घर लाई। और उस वेदवती ने वहां आकर मुनि को (आश्रम में) नही देखा। उस सती ने शिष्यों से पूछा। तुम्हारे गुरु कहां गए? शिष्यों ने उत्तर दिया हे माता ! गुरु से अस्थियाँ माँगकर वह इन्द्र वज्रधारी बना (वज्र बना लिया)। देवेन्द्र वज्र को लेकर अभी स्वर्ग में गया। हम सब गुरुजी से रहित हो गए। नीच देवताओं के द्वारा हम अनाथ बना दिये गए। हमारे दान में निपुण गुरुजी गोलोक में शिवजी से युक्त हुए। और दिव्य विमान पर चढ़कर शिव जी से प्रेम पाते हुए गए। (शिष्यों के) वज्र के समान कठोर वचन सुनकर वह (वेदवती) अत्यन्त दुखी हुई। देह त्याग करने की इच्छा से उसने काष्ठ संच के लिए कहा। उसके उस वचन को सुनकर शिष्य काष्ठ संचय के लिए तैयार हुए। और (वेदवती को) शरीर त्यागने की इच्छुक जानकर ब्रह्मा वहाँ आ गए। ब्रह्मा बोले- हे देवी! तेरे गर्भ में दधीचि के वीर्य से उत्पन्न, वंश को बढ़ाने वाला, चिरंजीवी, तपोधन, तपस्वी, बुद्धि-मानों में श्रेष्ठ पुत्र है। यह राक्षसों को मारने वाला होगा।वेदवती बोली-मेरे विवाह के समय से आज तक मेरे वो महर्षि ने स्पर्श नहीं किया, तो हे प्रभो! मुनि के बिना संयोग के मेरे गर्भ कैसे बतलाते हो? ब्रह्मा ने कहा - अमोघवीर्य महर्षि ने धोती में वीर्य छोड़ा। उस अधोवस्त्र के वीर्य के संयोग से ऋतुकाल के चौदहवें दिन, रज के तथा अमोधवीर्य के स्पर्श से तेरे गर्भ हो गया। इस लिए गर्भ की रक्षा के लिए 'हे पतिव्रत देह की रक्षा कर' (सती मत हो)। ब्रह्मा में इस वचन को सुनकर कुल के कार्यों में चतुर वह बोली (मैं) देह का त्याग करुंगी और ऋषि के बिना न जीऊँगी। और बच्चे गर्भ का प्रसव करने के लिए शीघ्र कोख चीर कर गर्भ को त्याग

करूंगी। तुम मेरे गर्भ का पालन करना। इस प्रकार गर्भवती ने गर्भ को त्याग कर अग्नि में शरीर को त्यागा, वह देवी सती हो गई। ब्रह्मा के देखते देखते पतिलोक को गई। उसके बाद ब्रह्मा ने वेदवती के गर्भ से उत्पन्न दाधीच बालक के हाथ के अंगूठे पर अमृत को लगा दिया। और पीपल के वृक्षों को पालन करने का आदेश दिया। और ब्रह्मा उस बालक को पीपल के वृक्षों को सौंपकर अपने लोक को चले गए। जब बालक पांच वर्ष का हुआ, तब फिर ब्रह्मा अपने मरीचि आदि पुत्रों के साथ पृथ्वी पर आए। और नामकरण आदिक किया। पीपल के फल खाने से वह बालक पिप्पलाद नाम से प्रसिद्ध हुआ। मैं यज्ञोपवीत देता हूँ तुम अभी ही जवान हो जाओ। तुम चारों वेदों में, यज्ञों में, शस्त्रों में और अस्त्रों में निपुण हो और तपके प्रभाव से तुम कल्पजीवी होओ। सुमेरू पर्वत की गुफा में, एकान्त में, मेरी आज्ञा से तप करो। इस बालक को लक्ष्य करके यह कहकर ब्रह्मा अन्तर्धान न हो गए।

इक्कीसवां अध्याय

वशिष्ठ बोले- मुनिश्रेष्ठ पिपप्लाद ने सुमेरू पर्वत पर तपस्या में स्थित होकर पीपल के वृक्ष के पास देवी की पूजा में लगे रहकर ब्रह्म के आदेश से मूलमंत्र को निरन्तर गाया। एक समय मुनीश्वर ने पुष्पभद्रा नदी में स्नान करने के लिए जाते हुए लक्ष्मी के समान सुन्दर पद्मनाथ की युवती (कन्या) को देखा। पास के लोगों से पूछा- यह कन्या कौन हैं? लोगों ने कहा, यह अनरण्य राजा की कन्या है। हे हिमालय! नृपश्रेष्ट अनरण्य सातों द्वीपों का स्वामी था। उस राजा के सौ पुत्र हुए। यह सुन्दरी कन्या दूसरी लक्ष्मी ही पद्मा नाम से है। मुनि ने अनरण्य के पास जाकर कन्या को मांगा। वृद्ध मुनिको देखकर वे कन्या को देने के उत्सुक न हुए। मंत्रियों ने बतलाया कि महर्षि तपोनिधि है। तब स्वर्ण, रत्न, उत्तम वस्त्र से युक्त दास दासियों के सहित, उस

कन्या को ऋषि के लिए देकरवह श्रेष्ठ राजा प्रसन्न हुआ। और व मुनिस्त्री को ग्रहण कर प्रसन्न हुए और अपने घर गए। उन (ऋषि) की सौभाग्यवती पत्नी पति-सेवा में परायण, मुनि के साथ, चन्द्रमा के साथ रोहिणी की तरह, आनन्द पाने लगी। उसके बाद उस राजा अनरण्य की कन्या पद्मा मन वचन तथा कर्म से भक्तिपूर्वक, जैसे नारायण की लक्ष्मी सेवा करती हैं, वैसे ही मुनि की सेवा करने लगी। एक समय हंसती हुई नदी पर स्नान को जाती हुई, सती को मार्ग में धर्म ने देखा, और राजा का रूप बना लिया। सुन्दर रत्नों से शोभित, रथ बैठा हुआ, रत्नों के आभूषणों से सजा हुआ, नौजवान, लक्ष्मीवान (शोभायमान), कामदेव के समान तेजवाले धर्म ने उस सुन्दरी को देखकर उस मुनि की स्त्री के मन के भावों को माया से जानने के लिए कहा। धर्म बोले हे लक्ष्मी के समान सुन्दरी ! हे राजयोग्ये (राजाओं के योग्य) ! हे मनोहरे (मन को लुभाने वाली) ! हे पूर्ण यौवने हे कामिनी ! हे स्थिर यौवने ! बुढ़ापे से बैचेन बूढ़े के पास तू शोभा नहीं देती अच्छी नहीं लगती। चन्दन तथा अगर को धारण करके राजा के वक्ष स्थल में तुम शोभित हो सकती हो। तप में लगे हुए सत्य को जानने वाले, मरणासन्न ब्राह्मण को छोड़ कर, रतिकर्म में शूरवीर, एवं कामातुर राजेन्द्र को देख। पूर्व जन्म के पुण्य से सुन्दर सुन्दर को पाता है। और वह सब (सौन्दर्य) रसिक के आलिंगिन से सफल होता है। हे सुन्दरी उस बूढ़े को छोड़कर, हजारों स्त्रियों के पति और काम शास्त्र में चतुर मुझको नौकर बनालो। सुन्दर बनों में, पहाड़ो में, महानदियों पर, खिले हुए पुष्पों की हवा से सुगन्धित बगीचों में, मलयागिरि पर , चन्दन की वायु से सुन्दर चन्दन वन में हे कामिनी! मैं तेरे साथ इच्छापूर्वक विहार करूंगा। कामज्वर से पीड़ित स्त्री की शान्ति करने में मैं समर्थ हूं। मेरे साथ विहार करो और यह जन्म सफल

करो। इस प्रकार कहते हुए तथा रथ से उतर कर हाथ पकड़ने में उत्सुक हुए धर्म को पतिव्रता बोली। पदमा बोली- हे दुराचारी! हे पापी ! हे नीच ! दूर हट अगर मुझे कामवासना से देखेगा, तो शीघ्र ही भस्म हो जावेगा। तप से पवित्र शरीर वाले मुनि-श्रेष्ठ पिप्पलाद को छोड़कर स्त्रियों के चाकर, विषयी ! तुझे ग्रहण करूंगी? जिसे स्त्रियों ने जीत लिया है, उसके स्पर्श मात्र से सारे पुण्य नष्ट हो जाते है। और पृथ्वी पर स्त्रियों के वशीभूत रहने वाले मनुष्य से बढ़कर कोई पापी नहीं। मुझ माता को स्त्री भाव करके जो तू कहता है, इसलिए समय पाकर मेरे शाप से तेरा नाश होगा। धर्म सती का श्राप सुन राजा का भेष त्याग कर अपना स्वरुप धारण कर कांपते हुए सती से गिड़गिड़ाकर बोले। धर्म बोले- हे सती ! हे माता! धर्म जानने वालो के गुरूओं का भी गुरू,एवं पराई स्त्रियों में माता की बुद्धि रखनेवाला धर्म मुझको जानो। मैं तेरे मन के भावों को जानने के लिए तेरे पास आया था। दैव से भ्रष्ट बुद्धि वाले मेरे पाप को आप क्षमा कीजिये। हे साध्वि! तुमने मेरा यथोचित दमन किया है। यह विरुद्ध नहीं हैं, क्योंकि ईश्वर ने कुमार्ग पर जाने वालों के लिए दण्ड का विधान किया है। यह कहकर जगद्‌गुरू धर्म उसके सामने खड़ा हो गया। और हे हिमालय ! वह सती उसको पहचान कर तत्काल बोली। पद्‌मा बोली-समस्त प्राणियों के सारे कर्मों के साक्षीभूत तुम ही धर्म हो। सबके अन्तःस्थलों में, सबकी आत्मा, सब बातों के जानने वाले और समस्त तत्वों के ज्ञाता हो। मेरे मन के भावों को जानने के लिए आपने क्यों मुझ दासी की अवहेलना की। हे धर्म। तुम्हारे करने पर (मैंने) जो कुछ किया (उसमें) मेरा कोई अपराध नहीं हुआ। हे प्रभो ! स्त्री स्वभाव से क्रोधित होकर तुम मेरे द्वारा भूल से श्राप दिये गए हो, उसकी अब क्या व्यवस्था हो सकती हैं? इसका मैं विचार करती हूँ। चाहे आकाश, समस्त दिशायें तथा

वायु भी नाश हो जायें, तो भी सती का शाप कभी निष्फल नहीं होगा। और हे धर्म! तुम्हारे नष्ट होने पर समस्त संसार का नाश हो जायेगा। इस विषय के उपाय में नासमझ हूं, तो भी तुमको मैं कहती हूं। सतयुग में (तुम) पूर्णिमा के दिन चन्द्रमा की तरह चारों चरणों वाले पूर्ण होकर हे धर्म! तुम हमेशा दिन रात शोभित होंगे। हे प्रभो! आपके एक चरण का अभाव त्रेता में होगा। दूसरे का द्वापर में और तीसरे का कलियुग में। कलियुग की समाप्ति पर तुम्हारा चौथा चरण भी छिप जायेगा। और फिर सतयुग के आने पर तुम परिपूर्ण होंगे। इस प्रकार कहती हुई सती को प्रसन्न मुखवाले, तेजस्वी, धर्म विनयपूर्वक वचन बोले। हे मेरी रक्षा करने वाली! तू धन्य हैं पतिभक्ता है। निरन्तर तेरा कल्याण हो। मेरे से वरदान ग्रहण कर। मैं दूंगा। तू जीवनपर्यन्त स्वामी के सौभाग्य से युक्त हो। हे साध्वी! तेरे घर कुबेर के घरों से भी अधिक सम्पन्न हों। और हे पुत्री तेरा पति स्थिर यौवन वाला तथा रतिशूर हो। हे सौभाग्य शालिनि! तेरे बारह उत्तम पुत्र होंगे। बारह सूर्यो के समान तेजस्वी, स्थिरप्रकृति, विज्ञ (विद्वान) वैष्णव तथा शिवभक्त वैदिक कर्मो को, करनेवाले, हे नृपपुत्री! हे साध्वी! तेरे कुल में होंगे। उस देवी को यह कहकर धर्म चले गए और वह पति के साथ बहुत वर्षो तक भ्रमण करती रही। अट्ठासी वर्ष के बाद बारह मार्गो में वीर्य को विभक्त कर गर्भ में रख मुनिश्रेष्ठ विरक्त हो गए। और पद्मा ने बारह पुत्रों को जन्म दिया तब ब्रह्मादिकों ने आकर उनका नाम करण आदि किया। ब्रह्मा बोले-हे मुनिश्रेष्ठ पिप्पलाद तुम्हारे पुत्र चिरंजीवी, ब्रह्मज्ञानी, गुणवान, और मुनीश्वर हों। पहला पुत्र बृहद्वत्स, दूसरा गौतम, तीसरा भार्गव, चौथा भारद्वाज। पांचवा कौच्छस हुआ। छठा यह कश्यप जानों। सातवां शाण्डिल्य और आठवां महाभाग अत्रि। नवमा यह पराशर और दशवां कपिल, ग्यारहवां

पुत्र गर्ग और बारहवां लघुवतस। तुम्हारे ये बारह पुत्र सूर्य के समान, यज्ञ में लगेहुए, मुनिवृत्ति में परायण तथा अष्ट सिद्धियों को देने वाले हों। वशिष्ठ बाले ब्रह्मा इस प्रकार आश्वासन देकर अपने ब्रह्मलोक को गए। और वे हिमालय पर्वत के श्री शैल पर्वत पर उत्तम तप करते हुए पिप्पलाद के पुत्र उन मुनियों ने उत्कृष्ट सिद्धि प्राप्त की। सिन्धु देश में उत्पन्न अत्रिगोत्री, अतिथि सत्कार करनेवाला, अग्निहोत्री, और वेद वेदांग का ज्ञाता ब्राह्मण जो देवशर्मा नाम से प्रसिद्ध था, उनके दश कन्याएं थी। उसने स्वयं छोटे बच्चे से आरम्भ करके दसों को कन्यायें दीं। एक दूसरे अंगिरा के दो श्रेष्ट कन्यायें थीं। बड़ी को बृहद्वत्स को और दूसरी को गौतम को दी। उन समस्त नारियों में एक एकके बारह २ पुत्र कश्यप के पुत्र (बारह सूर्यो) के समान उत्पन्न हुए। उन दाधीचों के एक सौ चवालिस कुल (गोत्र) हुए। जिन्होनें अम्बा का ध्यान कर परम कठोर तपस्या की।

बाईसवां अध्याय

हिमालय बोला - मैं पुनः देवी के उत्तम चरित्र को सुनना चाहता हूँ। आगे उन पिप्पलाद के बालकों ने क्या किया? वशिष्ठ बोले-मैं तुमको फिर देवी का उत्तम माहात्म्य, जो ब्रह्मा ने पहले नारद को कहा था, सुनाता हूँ। उसकी (तुम) सुनो। ब्रह्मा ने कहा - अब उस (देवी) का दूसरा भी माहातम्य तुझे मैं कहता हूँ। सूर्यवंश में उत्पन्न एक युवनाश्व राजा था। उसकी कोख को भेदकर राजा मान्धाता उत्पन्न हुआ। त्रेलोक्य के साम्राज्य की कामना से राजा ने वशिष्ट को कहा। जिससे मैं त्रैलोक्यविजयी, इन्द्रासनारुढ, महाशूर, अविचलगति और प्रभु (समर्थ) हो जाऊँ। हे गुरू! इस समय वैसा यज्ञ करना चाहता हूं। वशिष्ठ ने राजा को कहा मैं अभी इतना समर्थ नहीं हूं। विश्वामित्र के द्वारा पुत्रों की मृत्यु से सताया हुआ हूं। तू ब्रह्मा के ज्येष्ठ पुत्र अथर्वा जो

गुणों में श्रेष्ठ हैं । उनके पुत्र दधीचि है, वे सती सत्यप्रभा के पति है। ब्रह्मज्ञ, मुनियों में श्रेष्ठ, दानियों में शिरोमणि हैं। उस दधीचि का महातेजस्वी और तपस्वी पिप्लायन पुत्र हैं उसके सूर्य के समान बारह पुत्र हैं। इन बारह पुत्रों के एक एक के बारह २ पुत्र हैं। जो वेद ओर उपवेद जानने वाले हैं, मुनि हैं और व्रत पालन करने वाले हैं। कुलीन, सत्यवादी, ब्राह्मणों के भक्त, ब्राह्मणों में उत्तम, शिलोच्छवृत्ति से सन्तुष्ट रहने वाले ओर वेद वेदांग के जानने वाले है। हे राजन्! उन दाधीचों को आचार्य बनाकर तू यज्ञ कर। तेरा सब मनोवाच्छित सिद्ध होगा। इसमें किसी तरह का संदेह नहीं। इस प्रकार सुनकर वह राजा उनके (दाधीचों के) आश्रम को गया। और जलती हुई अग्नि के समान तेजस्वी उन मुनियों को नमस्कार किया। राजा ने अपने मन की इच्छा सुनाई, तब उन मुनीश्वरों ने राजा से कहा कि हम घोर वन में रहते है। और यह हमारा नियम है कि किसी को इन्कार नही करते। हे राजाओं में श्रेष्ठ। कैसे हम तुम्हारा कार्य सिद्ध न करें। पशुवर्जित सात्विक सामग्री इकटठी करों। श्रेष्ठ ब्राह्मणों को ऋत्विज घुनके याज्ञ मण्डप बनाओं। यह सुनकर उस राजा ने प्रसन्न मन होकर। सारी सामग्री लाकर उत्तम मुनियों की पूजा कर, जैसे कहा था, वैसे ही बहुत दक्षिणा वाला यज्ञ प्रारम्भ किया। उस राजा ने कपालपीठ में ब्राह्मणों के अनुमोदन से देवेशी (दधिमथी) का यज्ञ किय। उस राज़ा के जप करनेवाले ब्राह्मणों ने चारों वेदों के साथ महामाया के महास्तोत्र का मंत्रों के साथ जप किया। ज्ञानरुप, यदि ज्योतिरुप, प्रकाश मान, करोड़ ब्रह्माण्डों की रचना द्वारा क्रीड़ा करती हुई, अपने स्वरूप में रमण करनेवाली, दिव्यरूप, परनामवाली, श्यामादेवी हमें सदा पवित्र करें। ओ:म्, ह्रींकार रुपवाली, महामाया, स्वतंत्रा, चेतनरूपा, कला से परे, कलारूपा, बिन्दुरूपा, नादरूपा। ऊँ का रूपा,

प्रकृतिरूपा, बुद्धिमती, तेजवाली, संसार को धारण करने वाली, महालक्ष्मी , महाकाली, महासरस्वती, रमा। राजराजेश्वरी, बुद्धिदस्वरूपा, सिद्धिरूपा, मनोहर रूपवाली, नित्यरूपा, महारानी, कुलकुण्ड में सोनेवाली। श्यामवर्णवाली, रमण करनेवाली, प्रमाणरूपा, कामस्वरूपिणी, पार्वती, माहेश्वरी, ईश्वरी, भोगों के देने वाली, चौदह लोकरूपिणी, वाणीरूपा, सरस्वतीरूपा, शतम्भरी, सन्ध्यारूपिणी, सरस्वती, गोत्रस्वरूपा, मोहिनी, ऋतुजा, ऋगवेदरूपा, सामवेदरूपा, अथर्ववेदरूपा, यज्ञ की वेदरूपा, यजुर्वेदरूपा, वेदों से स्तुति की हुई। पुराणरूपा, इतिहासरूपा, शास्त्ररूपा, वेदरूपा, समभावरूपा, गतिरूपा, बुद्धिरूपा, मुक्ति को देने वाली, रत्नरूपा, विष्णुरूपिणी शुभी करने वाली, कल्याणरूपा, पृथ्वी की मुकुटरूप, तरूणी हंस पर सवार, हंसरूपिणी, सोडहं शब्द से उत्पन्न होने वाली, भावरूपिणी, अमृतरूपिणी। अणिमारूपा, मंहिमारूपा, प्राप्तिरूपा, विशेषसिद्धिरूपा, क्षमा करने वाली, नित्य पूर्ण आनन्द वाली, धारणरूपा, स्मृतिरूपिणी, लज्जारूपा, भयरूपिणी, सुन्दरकुल में पैदा हुई। तीन कूट वाली, तीन वीज वाली, गायत्रीरूप वाली, शताक्षरी, मृत्युंज्या, अग्निरूपिणी, सावित्रीरूपा, व्याहृतिरूपा, प्रमा नामवाली। एकाक्षमरूपिणी, तीन अक्षरों के मंत्ररूपिणी, चौसठ स्वरूप वाली स्वररूपा, माता, दधिमथी, समुद्र को क्षोभ देने वाली, कुलदेवी। गोकुलपालक मंगलरूपिणी, सब तरफ आंख सिर और मुखवाली, गणेशरूपिणी, विष्णुरूपा, सूर्यरूपा, शिवरूपिणी ब्रह्मारूपिणी, सब देने वाली, सब रूपवाली, देवताओं की माता, सबसे परे, ये देवी के एक सौ आठ नाम है। सर्वसिद्धि का प्रदान करने वाले इस स्तोत्र का उस राजा के ऋत्विजों ने जप किया। जो इसका बारबार पाठ करता है वह

समस्त कामनाओं को प्राप्त होता है। कपालपीठ के दर्शन करने का पुण्य प्राप्त होता है। इसमें संशय नहीं। विद्या, धन पराक्रम, स्त्री, बालक और अपनी इच्छा की हुई वस्तु। गया हुआ राज्य, गया हुआ धन, सारा अवश्य प्राप्त होता है। इस प्रकार यत्नपूर्वक मुनियों द्वारा देवी का जप किया गया। तब करोड़ों सूर्य के समान चमक वाली, महामाया प्रगट हुई, जिसके हाथों में स्त्रुक् और स्त्रुवा थे और जो यज्ञकुण्ड से उत्पन्न हुई थी। सोने के समान केशवाली, वरदान देने वाली, अच्छे ऐश्वर्य वाली, वेदों से स्तुति की हुई, उस मातेश्वरी को देख कर सब मुनि तथा राजर्षिया म उत्तमउस मान्धाता ने। नमस्कार कर महाराजा के योग्य सामग्री से पूजा की और फिर भक्ति से नम्र है मूर्तियाँ जिनकी ऐसे इन सब ने स्तुति की। मुनि बोले-हे ईश्वरी, हे माता, हे विष्णु रूपिणी, हे त्रिलोकी की रक्षा करने के नियमों का भले प्रकार धारण करने वाली, अनेक प्रकार के यज्ञरूपी शरीर वाली, तू यज्ञ करने वालों के लिए फलमुखी, फल देने वाली, और फलरूपिणी है। शिव, विष्णु, ब्रह्मा आदि देवता तेरे चरण-कमल का सहारा लेकर तेरी अनुकम्पा से संसार को संहार, पालन और उत्पन्न करने के कर्म में क्रम से समर्थ होते है। अनेक प्रकार के तीर्थों का समुदाय, और देवताओं का समूह ये स्वतंत्रता से कहीं देखे गये है। इस जगत में केवल तू ही स्वतन्त्र है। इसलिए हमारी परतन्त्रता को दूर कर। हे संसार के मंगलों की मंगलरूप! हे शिवे! कल्याण समूह को प्रफुल्लित करने वाली! हे महोदये! तेरी जय हो। यदि दधीचि ऋषि ने इन्द्र को अपने अस्थि प्रदान करने से सुकृत किया है, तो तू भगवती परमा हम पर प्रसन्न हो और शरीर धारण कर, हमारी कुल देवी हो। सूर्यवंश में उत्पन्न हुआ। यह राजाओं में श्रेष्ठ (मान्धाता) इन्द्र से अधिक वैभव की इच्छा करता है इसने कामना पूर्ण करने वाली तेरा सहारा लिया है। सो

तेरा बालक होने से तेरा कृपापात्र हो। जो पुरुष, मरण, जन्म और जरारूपी दु:खों से रहित तेरे चरण की शरण लेता हैं, हे दयासागर भगवति! वह परिपूर्ण वैभव से युक्त होवे। इस प्रकार स्तुति की हुई यज्ञेशी यज्ञकुण्ड से उत्पन्न हुई माता गम्भीर वाणी से मुनि और राजा से बोली। हे मुनियों में श्रेष्ठ! तुमने मेरी ही शरण ली है। इसलिए तुम्हारे कार्य करने वाली मैं तुम्हारी कुलदेवता होती हूँ। मेरी कृपा से तुम्हारे वंश के पुरुष बुद्धिमान् यशस्वी, कुलवान्, यशवाले और महाभाग्य-शाली होवें। जो कोई मेरा अनादर कर दूसरे देवता को मानेंगे, उनकी आशा सफल नहीं होवेगी ओर नाना प्रकार के दु:खों से दु:खी होवेंगे। प्रयाग से शुरू कर पुष्कर तक जो यात्रा कही गई है, उसका अवभृथ (यज्ञान्त) स्नान इस कुण्ड के स्नान से सफल होगा। फिर देवी ने राजा से कहा। तुम चक्रवर्ती, बड़ी कीर्ति वाले, इन्द्र से अधिक बलवाले, राजा के वंश के प्रवर्त्तक। तीन लोकों के एक पति, दुष्टों को दण्ड देने वाले, हे राजन्! तुम्हारे वंश के (लोग) सब राजा बनेंगे। मेरे अंश से उत्पन्न हुई शक्ति को, भक्ति सेयुक्त उन्नत कुलवाले, सात्विक मुनियों से सेवित, इस कपालपीठ में। यज्ञदि के समय भैंसा, बकरा और भेड़ आदि की हिंसा न करें। जो मूर्ख, कामी, घमंडी, पुरुष, पशुहिंसा करेंगे तो। वे मेरी आज्ञा से सर्वाथ से भ्रष्ट होवेंगे। सात्विक सामग्री प्रिय होने से सात्विकी रूपा मेरा सात्विक सामग्री से यज्ञ करना चाहिए। हे राजन्। यज्ञ, राक्सस और अन्यप्राणियों को सुरा तथा मांस आदि से मेरी पूजा नहीं करनी चाहिए। वे ही लोग पवित्र सर्व प्रकार की संपदा वाले और सुखी होंगे। तेरे अवभृथ स्नान से वंध्या स्त्री भी पुत्र को पाती है। गूंगेवाणी को और अंधे दृष्टी को प्राप्त होते हैं। पापों के नाश करने वाले इस कुण्ड में स्नान कर मेरी पूजा करने से रोगियों के रोग की निवृत्ति तथा कुष्ठ वालों

के कुष्ठ की शांति होती है। माघमास में अवभृथ (कुण्ड) में स्नान करना सब पापों का नाश करने वाला है और स्नान, दान जप करना, चाहने वालों के लिये महापुण्य का करने वाला है। माघ की शुक्ल सप्तमी को कैदार के सदृय इस कुण्ड में स्नान कर तर्पण कर षोडशाक्षर महामनु के मंत्र को जो मनुष्य जप करेंगे वे निःसंदेह सिद्ध होंगे। यह कहकर वह देवी यक्ष कुण्ड में प्रवेश कर गई। फिर उन्होनें उस देवी को नमस्कार कर पूर्णाहुति दी। दानी राजा ने दक्षिणा की इच्छा न रखने वाले उन (ब्राह्मणों) को। एक सौ चवालीस ब्राह्मणों को पीपल के पत्तों के साथ गाँव और कन्या एक एक दाधीच को दी और फिर उनका उत्कृष्ट आशीर्वाद पाया।

तेईसवां अध्याय

वशिष्ट बोले - माता की कृपा से फिर नृपश्रेष्ठ मान्धाता अपने नगर में आकर सप्तद्वीपों से युक्त पृथ्वी का राज्य करने लगा। और उस देवी की कृपा से मान्धाता ने राक्षसों को भयभीत किया। शीघ्र ही सभी रावणदिक दस्यु (लुटेरे) व्याकुल हो गए। तभी इन्द्रादिक देवता उसके पास आकर। प्रसन्न मन से राजा मान्धाता को बोले। आपने अपने पराक्रम से लुटेरों को डराया हैं। इसलिए आप पृथ्वी पर 'त्रसदस्यु' इस नाम से प्रसिद्ध होंगे। यह कहकर इन्द्रादिक देवता अपनी पुरी अमरावती को चले गये। (और) तब भक्ति में लीन उस मान्धाता ने नवरात्रि में देवी के बहुत दक्षिणवाले अनेक यज्ञ किये। उससे (तब) बिन्दुमती के गर्भ सै पुरुकुत्स, अम्बरीप और मुचकुन्द नामवाले प्रतापी तीन पुत्र हुए। और पचास कन्यायें हुई और बहुत सम्पदायें हुईं। दधिमथी की कृपा से (उन्हें) उत्तम सुख प्राप्त हुए। इसलिए दधिमथी देवी का दर्शन और पूजन करते हुए मनुष्य संसार में सब सम्पदा पायेंगे। हे राजा! चौदस, नवमी तथा अष्टमी को देवी को विधिपूर्वक स्नान कराने से वाजपेय यज्ञ का फल प्राप्त होता

है। जो कोमल, बारीक तथा विचित्र (रंग बिरंगे) वस्त्र देवी को अर्पित करता है, वह शिवलोक को जाता है। जो सुगन्धित पुष्पों से अथवा मालाओं से चण्डिका की पूजा करता है, व अश्वमेघ यज्ञ का फल पाता है। संपूर्ण धूपों से गूगल की धूप श्रेष्ठ है। उसकी धूप का प्रयोग करने वाला सम्पूर्ण मनचाहा फल पाता है। घी का दीपक जलाकर जो देवी की पूजा करता है, वह अश्व मेघ का फल पाकर दुर्गा का गण (सेवक) बनता है। जो माहेश्वरी की तैल का दीपक जला करपूजन करता हे, वह वाजपेय यज्ञ का फल पाकर किन्नरों के साथ आनन्द पाता है। गुड़ की डली, घी का भोजन तथा शक्कर घी से बना हुआ अन्न, और भी बहुत से व्यंजनों से। श्रद्धा के साथ बूरा मिली हुई खीर का भोजन जो श्यामा (दधिमथी) के भोग धरता है, तो राज्य उसके हाथ में ही है। आम, नारियल, खजूर और विजोरा नींबू जो देवी के अर्पण करते है, वे परमपद को पाते है। जो सोने अथवा चांदी का छत्र देवी के चढ़ाते हे, वे व्यक्ति अखण्ड ऐश्वर्य के साथ राज्य का उपभोग करते हैं, । जो मनुष्य दूध देने वाली, पवित्र, जवान, शील स्वभाववाली, गाय भगवती को देता है वह अश्वमेघ यज्ञ का फल पाता है। जो मनुष्य अम्बिका के लिए जमीन, खेत, अथवा आम के झाड़ देता है (वह हमेशा) पुत्र-पौत्रों से युक्त होकर इन्द्रलोक में आदर पाता है। हे महावाहों! देवी के लिए, ध्वजा, सफेद अथवा चपरंगी पताका, टोकरी (घूंघरू) समूह से युक्त और सफेद कमल के रंग को देकर स्वर्गलोक में उस स्थान पाता है। जो भक्त, श्रीकर (लक्ष्मी का देने वाला), भद्र (उत्तम) ताम्बूल भक्ति पूर्वक देवी के चढ़ाता है (उसकी) कृपा से (वह) निश्चय कर के हमेशा धनवान् बना रहता है। जो भक्ति से अम्बिका का पूजन कर हविष्यान्न की आहुति देता है और ब्राह्मणों को भोजन कराता है तो, (उससे) महालक्ष्मी प्रसन्न

होती है। जो देवी की पूजा नहीं करते, वे कुम्भी पाक नरक में गिरते है। वे पुत्र, स्त्री तथा धन से रहित होकर इस संसार में पिशाच की तरह घूमते हैं। (जिस दाधीच ने) जगन्नाथ आदि के सौ बार दर्शन किये और एक बार भी दधिमथी का दर्शन नहीं किया, वह दाधीच, नहीं है। दाधीच वंश में उत्पन्न होकर जिन्होनें आदर सहित दधिमथी के दोनों चरण स्पर्श नही किये, वह दाधीच नहीं है। जो देवी के लिए अर्पित न हुआ वह कुल, विद्या तथा विद्वत्ता धिक्कार के योग्य है वह सच्चा दाधीच नहीं है। (जिसने) इष्ट किया, दान दिया, यज्ञ किया, जप किया और अनेक प्रकार के तप तपे (परन्तु) दधिमथी के दर्शन नहीं किये, उस दाधीच के वे सब वृथा है। ज्यादा क्या कहें, जिसने कुलमाता के दर्शन नहीं किये, उसका जन्म निरर्थक हैं (वह) दाधीच नहीं है। वृति के लिए प्रतिदिन दुष्टों के मुख को देखता है (और)दधिमथी का दर्शन नही करता है, वह नाममात्र का ही दाधीच है। जो नित्य कल्याण, धन, धान्य तथा सुखों को चाहते है, उनको भक्ति-पूर्वक राजराजेश्वरी लक्ष्मी (दधिमथी) का पूजन करना चाहिये। हे हिमालय! जो पहले तुमने पूछा, वह सब मैंने (तेरे को) कहा! जो लोग इस दधिमथी पुराण को श्रद्धापूर्वक सुनेंगें। (वे) राहु से छोड़े हुए चन्द्रमा के जैसे समस्त पापों से मुक्त होकर (और) सम्पूर्ण यश लक्ष्मी को पाकर आरोग्यता-पूर्व दीर्घायु होंगे। शिव बोले - देवी के (दधिमथी के) चरित्र को सुन कर तेरे पिता (हिमालय) वशिष्ट की पूजाकर (तथा) प्रणाम कर अपने घर गए। और फिर (निज) पत्नी मैना के साथ पूर्ण सलाह करके मेरे लिये तेरे पिता के द्वारा तू दी गई जिससे तू मेरी प्यारी हुई। जो कोई पाप नाश करने वाले देवी के इस चरित्र को सुनेंगे सुनने वालों को(यह कथा) बेटे-पोते आदि, धन, धान्य, सुख देनेवाली होगी। जिस प्रकार अथर्वा की

स्त्री शान्ति ने दधीचि नामक पुत्र पाया (वैसे ही) स्त्रियां उसके चरित्र को सुनने से पुत्रों को प्राप्त करेंगी। देवी के चरित्र को सुनकर, कथा- वाचक की पूजा करनी चाहिए गाय, पृथ्वी, सोना, वस्त्र कथा वाचक को देना चाहिए। जो सुन्दर अक्षरों से लिखा हुआ यह देवी पुराण ब्राह्मणोंके लिये दान देता है वह सर्वसिद्धि को पाता है। (जो) ब्राह्मणों को, बालकों को, कन्याओं को सौभाग्यवती स्त्रियों को, तथा गरीबों को (इन सबको) वस्त्रों तथा भोजनों से सन्तुष्ट करेगें। जो दधिमथी महालक्ष्मी के पुराण को पढ़ेंगे, उन की समस्त कामनायें सिद्ध होंगी, इसमें कोई सन्देह नहीं। इस दधिमथी पुराण के पढ़ने से (मनुष्य) अपार धन, घोड़े, हाथी, बेटे-पोते, धर्म, आयु, यश और शोभा को पाते है।

ओम शांतिः शांतिः

॥ शुभमस्तु ॥

श्री दधिमथी देवी की आरती

ऊँ जय दधिमथी माता, मैया जय दधिमथी माता।
आदि-शक्ति परमेश्वरि, भक्तों की त्राता॥ ऊँ॥

महारण्य में प्रगटी, दधिमथी महाराणी।
तुम साक्षात् भवानी, तुम्हीं वेदवाणी॥ ऊँ॥

चौंसठ योगिनी भैरव, सब तेरे अनुचर।
काली, रमा, शारदा, तुम हो देवी वर॥ ऊँ॥

उदयपुराधीश्वर को दर्शन स्वप्न दिया।
जिन मन्दिर बनवाकर, वांछित पूर्ण किया॥ ऊँ॥

ज्योति अहर्निश राजत, चढ़ै पुष्प, पाती।
भक्त-मण्डली निशदिन, अष्टपदी गाती॥ ऊँ॥

गोठ मांगलोदहुं की, तुम ही हो माता।
दाधिमथों की त्राता, सेवक सुख-दाता॥ ऊँ॥

मरू में देख निकट जल, अम्ब सदन तेरे।
बड़े-बड़े नास्तिक भी, बनते तब चेरे॥ ऊँ॥

आसोजी और चैती, दो मेले भरते।
यात्री जहाँ हजारों, पुण्य लाभ करते॥ ऊँ॥

ध्यावे दधिमथजी को, और आरती गावे।
कह धरणी धर वह नर, वांछित फल पावे॥ ऊँ॥

दधियमध्यष्ट पदी

जय जय जनक सुनन्दिनी, हरि वन्दिनी हे ।
दुष्ट निकन्दिनी मात, जय जय विष्णु प्रिये ।

सकल मनोरथ दायिनी, जग सोहिनी हे ।
पशुपति मोहिनी मात, जय जय विष्णु प्रिये ।

विकट निसाचर कुंथिनी, दधिमंथिनी हे ।
त्रिभुवन ग्रथिनी मात, जय जय विष्णु प्रिये ।

दिवानाथ सम भासिनी, सुख हासिनी हे ।
मरूधर वासिनी मात, जय जय विष्णु प्रिये ।

जगदंबे जय कारिणी, खल धरिणी हे ।
मृगरिपुचारिनी मात, जय जय विष्णु प्रिये ।

पिपलाद मुनि पालिनी, वपु शालिनी हे ।
जलदल दालिनी मात, जय जय विष्णु प्रिये ।

तेज - विजि सोदामिनी, हरि भामिनी हे ।
अहि गज गामिनी मात, जय जय विष्णु प्रिये ।

धरणीधर सुसहायिनी, श्रुति गायिनी हे ।
वांछित फल दायिनी मात, जय जय विष्णु प्रिये ।

।। दधिमथ्यै नमः।।

श्री दधिमती माताजी गोठ मांगलोद

आरती संग्रह

मा दधिमती (भगवती) की आरती, भजन, चालीसा, छंद और इतिहास का अनूठा संग्रह

वंश विधाता महामाया दधिमती,
जनम पूर्वला वचन पर मां धरा मारू में निसरी
रटता रटता शरण होगी, धेनु सारी विसरी
कहे गोपाल जगदम्बे ज्योति भू वट विसरी

प्रकाशक

श्री नंद के गोपाल बाल पुजारी

ग्राम दुगस्ताऊ तह. जायल जिला नागौर राजस्थान

मूल्य -25 रूपये

।। कर्मण्ये वाधिकारस्ते, मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफल हेतु भूर्माते सङ्गोऽस्त्व कर्माणि।।
स्व. श्री नंदलाल पाराशर (पुजारी)
पूज्य दादाजी को सादर श्रद्धांजलि
ओ३म् त श्रत्वा दध्यङ् ऋषि :पुत्रईधे,
अथर्वण वृत्रहणं पुरन्दरम ।(शुक्ल यजुर्वेद)
स्व. श्रीमती शारदा देवी पाराशर
पूज्य माताजी को सादर श्रद्धांजलि
श्रद्धावनत
रमेश, मुकेश, बालकृष्ण पाराशर, दुगस्ताऊ

।। श्री गणेशाय नमः ।।

श्री गजानन्द स्तुति

ओ३म् गजाननं भूत गणाधि सेवितम्,
कपित्थ जम्बू फल चारू भक्षणम्।
उमासुतं शोक विनाश कारकम्,
नमामि विघ्नेश्वर पाद पंकजम्।
सर्व विघ्न विनाशाय सर्व कल्याण हेतवे,
पार्वती पुत्र पुत्राय गणेशाय नमो नमः।।

❀❀❀❀❀

श्री गणपति आरती

जय गणेश जय गणेश देवा।
माता जांकी पार्वती पिता महा देवा।। जय।।
लड्डुवन को भोग लगे संत करे सेवा।
पान चढ़े पुष्प चढ़े और चढ़े मेवा।। जय गणेश।।
एक दंत दयावन्त चार भुजा धारी।
मस्तक पर सिन्दुर सोहे, मूसे की सवारी।। जय गणेश।।
अंधन को आंख देत कोढ़ियन को काया।
बांझन को पुत्र देत निर्धन को माया।। जय गणेश।।
दीनन की लाज रखो शंभु सुत वारी।
कामना को पूरी करो जाऊँ बलिहारी।। जय गणेश।।

❀❀❀❀❀

गायत्री मंत्र

ओ३म् भुर्भुवः स्वः। तत्सतवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धीयो यो नः प्रचोदयात्।।

❀❀❀❀❀

शान्ति पाठ

ओ३म् द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथ्वी शांतिरायः शान्तिरोषधयः।
वनस्पतयः शान्ति विश्वदेवाः शान्ति ब्रह्म शान्तिः सर्व शान्तिः
शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्ति रेधि। ओ३म् शन्तिः शान्तिः शान्तिः।

❀❀❀❀❀

श्री दधिमथी अष्टापदी

जय जय जनक सुनन्दिनी हरि वंदनी है, हरि वंदनी है।
दुष्ट निकंदनी मात जय जय विष्णु प्रिये।। टेर।।
सकल मनोरथ दोहिनी, जग सोहिनी है।
पशुपति मोहिनी मात, जय जय विष्णु प्रिये।। 1।।
विकट निशाचर कुन्थिनी, दधिमंथनी है।
त्रिभुवन ग्रन्थिनी मात, जय जय विष्णु प्रिये।। 2।।
दिवानाथ सम भासिनी, मुख हासिनी है।
मरूधर वासिनी मात, जय जय विष्णु प्रिये।। 3।।
जगदंब जय कारिणी, खल हारिणी है।
मृग रिपु चारिणी मात, जय जय विष्णु प्रिये।। 4।।
जगत पालिनी, जय जय विष्णु प्रिये।
खल दल दालिनी मात, जय जय विष्णु प्रिये।। 5।।
तेज विजित सौदायिनी, हरि भामिनी है।
अहि गज गामिनी मात, जय जय विष्णु प्रिये।। 6।।
धरणी धर सुसुहायिनी, श्रुति गायिनी है।
वांछित दायिनी मात, जय जय विष्णु प्रिये।। 7।।

❀❀❀❀❀

।। श्री शिव पंचाक्षर स्तोत्रम्।।

नागेन्द्रहाराय त्रिलोचनाय,

भस्माङ्गरमाय महेश्वराय।
नित्याय शुद्धाय दिगम्बराय
तस्मै न काराय नमः शिवाय।। 1।।
मंदाकिनी सलिल चंदन चर्चिताय
नन्दीश्वर प्रमथनाथ महेश्वराय।
मन्दार पुष्प बहुपुष्प सुपूजिताय
तस्मै म काराय नमः शिवाय।। 2।।
शिवाय गौरीवदनाब्जवृन्द
सूर्याय दक्षाध्वरनाशकाय।
श्री नील कण्ठाय वृष ध्वजाय
तस्मै शि काराय नमः शिवाय।। 3।।
वशिष्ठ कुम्भोदभवगोतमार्य
मुनीन्द्र देवार्चितशेखराय।
चन्द्रार्क वैश्वानर लोचनाय
तस्मै व काराय नमः शिवाय।। 4।।
यक्षस्वरूपाय जटाधराय
पिनाक हस्ताय सनातनाय।
दिव्याय देवाय दिगम्बराय
तस्मै य काराय नमः शिवाय।। 5।।
पंचाक्षरमिदं पुण्यं यः पवेच्छिवसंनिद्यौ।
शिवलोकमवाजेति शिवेन सह मोदते।। 6।।
।। इति श्रीमच्छड्‌कराचार्य विरचितं शिव पंचाक्षर स्तोत्र संपूर्णम।।

❀❀❀❀❀

शिव शक्ति वंदन

कर्पूर गौरं करुणावतारं संसार सारं भुजगेन्द्र हारम्।
सदा वसन्तं हृदयारविन्दे भवं भवानी सहितं नमामि।।

❀❀❀❀❀

भगवान श्री शिव

जय शिव ओंकारा, भज शिव ओंकारा।
ब्रह्मा विष्णु सदाशिव अर्द्धंगी धारा।। ओ३म् हर हर महादेव।।
एकानन चतुरानन पंचानन राजै।
हंसासन गरूडासन वृषवाहन साजै।। 2।। ओ३म् हर हर महादेव।।
दो भुज चारू चतुर्भुज दशभुज अति सोहे।
तीनों रूप निरखते त्रिभुवन–जन मोहे।। 3।। ओ३म् हर हर महादेव।।
अक्षमाला वनमाला रूंडमाला धारी।
त्रिपुरारी कंसारी करमाला धारी।। 4।। ओ३म् हर हर महादेव।।
श्वेताम्बर पीताम्बर बाथम्बर अंगे।
सनकादिक गरूडादिक भूतादिक संगे।। 5।। ओ३म् हर हर महादेव।।
कर मध्ये सुकमण्डल चक्र शूलधारी।
सुखकारी दुखहारी जग–पालनकारी।। 6।। ओ३म् हर हर महादेव।।
ब्रह्मा विष्णु सदाशिव जानत अविवेका।
प्रणवाक्षर में शोभित ये तीनों एका।। 7।। ओ३म् हर हर महादेव।।
त्रिगुणस्वामिकी आरति जो कोई गांव।
भणत शिवानन्द स्वामी वांछित फल पावै।। 8।। ओ३म् हर हर महादेव।।

❀❀❀❀❀

श्री दधिमती माताजी को कुल देवी रूप में पूजने वाली जातियों की गोत्रावली निम्न है–

जाट समाज– 1.बिड़ियासर 2. चांगल 3. मौगलोड़ा 4.रिणवाँ 5. डिडेल 6. ईनाणियाँ 7. फिड़ौदा 8. दुगस्तास 9. छेडू 10. छोलिया 11. लटीवाल 12. वैडा 13. बैरा 14. नैणवा 15. डूकिया 16. खोखर 17. गौरा 18. ठाका 19. जाखड़ 20. सिंवर 21. खोजा 22. ठोलिया 23. घटेला 24. कंकड़ावा 25. गोदारा 26. पूनियां 27. मंडीवाल 28. थालोड़ 29. महरिया 30. ढ़ाका 31. चोयल 32. जलवाणिया 33. धायल 34.भाकर 35. कमेडिया 36. चांदू 37. बासठ 38. बांगड़वा 39. मंडीवाल 40. रूल्याणियाँ 41. बुगालिया 43.

रायल 44. जाँखड 44. दन्तुसलिया 45. लोमरोड़ 46. खोखर 47. मुन्डेल 48. मामडोदा 49. बौगडा 50. कावडिया 51. सरडियां 52. जलामल्या 53. बापोडिया 54. निवाद 55. बांता 56. पिचक्या 57. मीया 58. धोचक 59. डूडी 60. राड 61. रोयल 62. नगवाडिया 63. डारा 64. मंडा 65. छरंग 66. बाजीया 67. लिल 68. मील 69. बंठा 70. खदाल 71. चोटिया 72. रलिया 73. चोचलीया 74. गोठीया 75. राव 76. सारण 77. खुड़खुड़िया 78. रलिया 79. सिलगावां 80. ततुवाल 81. सोमडवाल 82. थोरि 83. मोरड़ा 84. सदावत 85. चरवा 86. धोटिया 87. बुगासरा 88. रोज 89. सिरोहिया 90. लवेच्छ 91. हुडडा 92. फरड़ोद 93. ज्याणी 94. भंवरीया 95. कमेड़िया 96.तोण 97. बरणगांवा 98. बाटण 99. धतरवाल 100. बेणीवाल 101. कुलकगर 102. रेनवा 103. सुण्डा।

माहेश्वरी समाज- 1. बाहेती 2. मणियार 3. जाखोटिया 4. ईनाणियां 5. बलदता 6.डागा 7. रायगाधी 8. लोहिया 9. चेचानी 10.गांधी 11. करवा 12.भटाड़िया 13. पाटोधा एवं अन्य 14. चरखा 15. असावा 16. कचोलिया 17. गेलडा 18. झंवर,19. लोहिया, 20. बहेती, 21. अटल,22 खत्री

अन्य जातियां – 1. राजपूत (पुंडोर) 2. सैनी 3. कुम्हार 4. रेगर 5. खटीक (दायमा) 6. माली 7. खियालियाँ पठान 8. जांगीड़ 9. आचारि दायमा 10. गौरी 11. भंडारी 12. चौरड़िया 13. गोलचा 14. गोदिया

ओसवाल जैन समाज- 1. भुतोड़िया 2. गेलड़ा 3. अत्यावा 4. औसवाल 5. गिलहड़ा।

संपूर्ण दाधिच समाज- सभी गौत्र

दुग्धाभिषेक का समयः प्रातः 4 बजे से सुबह 8 बजे

आरती समयः मंगला आरती प्रातः 5 बजे, श्रृंगार आरती 11 बजे भोग संध्या आरती– सूर्यास्त के बाद, शयन आरती रात्रि 9 बजे

किसी प्रकार की सहायता हेतु दधिमती सेवा पूजा अर्चना समिति से करे– 01583– 266241, 266346, 9414863847, 9460653025

पुजारी गोपाल कृष्ण पाराशर (दादा)

❀❀❀❀❀

प्रातः स्मरणीय मंत्रः

प्रातः उठते ही निम्न श्लोक के साथ कर दर्शन करना चाहिए-

कराग्रे वसते लक्ष्मीःकर मध्ये सरस्वती।

करमूले च गोविन्दः, प्रभाते कर दर्शनम्।।

प्रातः काल उठकर जमीन पर पैर रखने के साथ निम्न श्लोक पढ़े-

समुन्द्र वसने देवी पर्वत स्तन मण्डले।

विष्णु पत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्श क्षमस्व मे।।

स्नान करते समय निम्न श्लोक का उच्चारण करें-

वक्रतुंड महाकाय कल्यान्तदहनोपम

भैरवाय नमस्तुभ्यं हमुजां दामुमर्हसी।।

गंगे च यमुने चैव गोदावरी सरस्वती।

नर्मदे सिंधु कावेरी जलेरिमन सन्निधिं कुरू।।

भोजन करने से पहले निम्न श्लोक पढ़े-

अन्नपूर्णे सदापूर्ण शंकर प्राण वल्लभे।

ज्ञानवैराग सिद्धयर्थं भिक्षां देहि च पार्वती।।

रात्रि में शयन से पहले निम्न श्लोक पढ़े-

अच्युतं केशवं विष्णु हरि सोम जनार्दनम्।

हसं नारायणं कृष्णं जपते दुः स्वप्नशांतये।।

सब समय के लिए महामंत्र निम्न श्लोक पढ़े-

श्री कृष्ण गोविन्द हरे मुरारे हे नाथ नारायण वासुदेव।

मुझे आशा ही नहीं दृढ़ विश्वास है कि उपरोक्त मंत्रो का नित्य पाठ करने वाला जीवन में सदैव सुखी रहेगा।

❀❀❀❀❀

स्तुति

हे राम! पुरूषोतमा नरहरे नारायण केशवा,

गोविन्द गरूड़ध्वज गुणनिधे दामोदर माधवाः,

श्रीकृष्णः कमलापते यदुपते, सीतापते श्री पते,

बैकुण्ठाधिपते चराचरपते लक्ष्मीपते पाहिमाम्।।

आदौरामतमोवनादिगमनम् हत्वा मृगकांचनम्
बैदेही हरणं जटायु मरणं सुग्रीवसंभाषणम्।
बालिनिग्रहणं समुद्र तरणम् लंका पुरी दहनम्।
पश्चाद्भावण कुम्भकर्ण हननम् एतादि रामायणम्।

आदौ देवकी देव गर्भ जननम् गोपी गृहे वर्धनम्।
माया पूतन जीवतापहरणम् गोवर्धनो धारणम्।
कंसाच्छेदन कौरवादि हननम् कुन्ती सुता पालनम्।
एतद् श्रीमदभागवत पुराण कथितम् श्री कृष्णलीलामृतम्।।

कस्तुरी तिलक ललाट पटले वक्षस्थले कौस्तुभम्।
नासाभ्रे वर मौकिक करतले वेणु करे कंकणम्।
सर्वांग हरिचंदन सुललित कण्ठे च मुक्तावली।
गोपस्ती परिवेष्ठीतो विजयते गोपाल चूड़ामणि।।

शांताकरम् भुजंगशयनम् पदमनाभम् सुरेषं।
विषाधारं गगन सदृशं मेघवर्ण सुभांगम्।
लक्ष्मीकांत कमलनयनम् योगिभिध्योनगम्य।
वंदे विष्णु भव भयहरणं सर्वलोकेकनाथम्।।

❀❀❀❀❀

चौघड़िया मूहूर्त

सूर्योदय से सूर्यास्त तक का समय दिन व सूर्यास्त के पश्चात अगले दिन तक का समय रात में गिना जाता है। दिन व रात के समय को 8 से भाग देने पर जो भागफल आए वह एक चौघड़िया का समय होगा। लाभ अमृत एवं शुभ की चौघड़िया श्रेष्ठ फलदायक है। चर की चौघड़िया यात्रा एवं व्यापारिक कार्य के लिए शुभ है। उद्वेग, रोग एवं काल अशुभ फलदायक है।

दिन का चौघड़िया (सूर्योदय से सूर्यास्त तक)
रात का चौघड़िया (सूर्यास्त से सूर्योदय तक)

❀❀❀❀❀

भगवती स्तोत्र

जय भगवती देवी नमो वरदे, जय पाप विनाशिनी बहु फल दे,
जय शुभ निशुभ कपाल धरे, प्रणमामी तू देवी नराती हरे।
जय चन्द्र दिवाकर नेत्र धरे, जय पावक भूषित वस्त्र वरे,
जय भैख देह निलीन परे, जय अंधक दैत्य विशेष करे।
जय महिष विमर्दिनी शुल करे, जय लोक समस्तक पाप हरे।
जय देवी पितामह, विष्णु, मते, जय भास्कर शक शिरो अवनते।
जय षण्मुख सायुध ईशनुते, जय सागर गामिनी शंभु नते,
जय दुःख दारिद्र विनाश करे, जय पुत्र कलत्र वि – वृद्धि करे।
जय देवी समस्त शरीर धरे, जय नाक विदर्शिनी दुःख हरे,
जय व्याधि विनाशिनी मोक्ष करे, जय वांछित दायनी सिद्ध करे।
एतत् व्यास कृतम स्तोत्रयः पठेत् नियत शुचीः।
गृहे वा शुद्ध भावेन प्रिता भगवती यदा।

(श्री रामचन्द्र कृपालु भज मन हरण भव भय दारूणम)

जगदंब अब विलंब मति कर मात जननी भगवती।
बहु जन्म में भटकत फिरया, अब तो दया कर मां भगवती दधमन्त।
तिहुँ लोक में प्रकाश तेरो, आदि शक्ति महासती।
दूर करदे तिमिर मेरो, प्रेम माया हो जा मती।
तू रमा मणि राधिका, तू ब्रह्म शक्ति सरस्वती।
मन बुद्धि मेरी शुद्ध कर दे, चरण में हय जा रती।
तू अटल ज्योति कालिका, तू ही है लक्ष्मी पार्वती।
ज्योति में तेरे ज्योत कर दे, जन्म फिर दीजे मती।

दास किशन स्तुति करके, प्रेम री लीला कथी।
ज्ञान भक्ति दे, भवानी अंत में दीजे मती।

❀❀❀❀❀

देवी ध्यानम्

कर्पूर गौरं करूणावतारं संसार सारं भुजगेन्द्र हारं।
सदा बसन्तम् हृदयारविन्दे भवं भवानी सहितं नमामि।
हरिः ओ३म् यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानिधम्माणि प्रथमान्यान्सन्।
तेहनाकम्महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवा।
ओ३म् बारंबार कही सुनि न चिते दे सूती कहा नींद में।
क्या तूं काम लगी भवन में क्या तू लगी ध्यान में।
क्या थारी मर्जी हमें है गरजी देवी जरा ध्यान दो।
सुन लो चित्त लगाय अब तो कीजे भलो भक्त को।
त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमे।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्व मम देव देव।
सिंहा दुत्थाय कोपा धड़ति धड़ धड़ा धाव माना भवानी।
देत्यानां सहस्त्रपाती तड़ति तड़ तड़ा तोडयन्ति शिरांसी।

❀❀❀❀❀
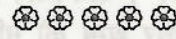
तेषां रक्तं पिवन्ती घुटति घुट घटा घोटयन्ति पिशाचानां।
पीत्वा पीत्वा हसन्ती खखिल खिल खिला शांभवींमा पुनातु।
दें दें बुद्धि दें भवानी धन दे विद्या बल स्थूल दें।
षट् कीर्ति वर दें कमत्र सुख दें दान सुपात्रश्च दें।
इच्छा भोजन दें गुरू स्मरण दें षट् कर्मदा नित्य दें।
विद्यारस रूचि दें हरि भजन दें मैया तेरे दर्शन दें।
माया कुंडलिनी किया मधुमति काली कला मानिनी।
मातंगी विजया जया भगवती देवी शिवा शांभवी।
शक्ति शंकर वल्लभा त्रिनयना वाघ वादनी भेरवी।
ह्रड्कारी त्रिपुरा पुरा गुणमयी माता कौमारीश्वरी।
या माया मधुकैटभ प्रमथिनी या माया महिषोन्मूलनी।

या धूम्रेक्षणा चंड मुंड मथिनी या रक्त बीजासनी।
शक्ति शुंभ निशुंभ दैत्य दलिनी या सिद्धि लक्ष्मी परा।
या दुर्गा नवकोटि मोक्ति सहिता मां पातु विश्वेश्वरी।

दोहा

काया हंस बिना नदी जल बिना दाता बिना याचकाः।
भ्राता स्नेह बिना फल ऋतु बिना धेनुश्च दुग्धो बिना।
नारी पुत्र बिना नरो धन बिना, विद्या बिना ब्राह्मणा।
एतो विजोतेना बिना दीपक बिना मंदिरा।।
ब्रह्मां मुरारी त्रिपुरान्तकारी भानुः शशि भूमि सुतो बुधश्चः।
गुरुश्च शुक शनि राहु केतवः सर्व ग्रहा शांति करा भवन्तु।

❀❀❀❀❀

तर्जः-श्याम करेला बेड़ा पार

म्हारी दुर्गा करेली बेड़ा पार, दधिमती की महिमा अपार।
गोठ मांगलोद गांव है जारी, ददमन्त की रचना न्यारी।
हां ए अंबा मन्दिर बणियों है गुलजार। दधिमथी। 1।
सूरज सामी पोल है छाजे निज मंदिर में आप बिराजो।
हां ए अंबा दर्शन की बलिहार । दधिमथी। 2।
सिंह उपर सोहे असवारी, अधर थम्ब की महिमा भारी।
हां ए अंबा मोहनी सूरत सुहाय। दधिमथी। 3।
चोक च्यार जहां बनी तिवारी, अधर थम्ब की महिमा भारी।
हां ए अंबा मंदिर बणियो है गुलजार। दधिमथी। 4।
चीर केसरियां सोवे साड़ी, लहंगो जरकस वन्यो अति भारी।
हां ए अंबा यज्ञ कुण्ड शुभकारी। दधिमथी। 5।
केशर खोल बनी अति सुंदर, कुंकुम बिन्दी है सिर ऊपर।
हां ए अंबा कानों में कुंडल भलकदार। दधिमथी। 6।
कमर में कनडोरो है अति सुंदर, पग में भूषण बाजे नुपुर।
हां ए अंबा कनठी है तिमणी चन्द्रहार। दधिमथी। 7।
मुख में बीड़ा पान रचावे, गले पुष्पन का हार धरावे।
हां ए अंबा सिंह चढ़ी असवार। दधिमथी। 8।

चैत्र आसोज में मेला आवे, भक्त आपका ध्यान लगावे।
हां ए अंबा दरसन पावे नर नार। दधिमथी। 9।
जात जडूलो सब कोई देवे चूरमो श्रीफल भोग लगावे।
हां ए अंबा झारी में रूपयो कलदार। दधिमथी। 10।
पछिम कुंड बड़ा शुभकारी जहां महादेवजी की बनी है तिवारी।
हां ए अंबा गोल पेड़ो है जल सूं अपार। दधिमथी। 11।
विधि से होवे पूजा तुम्हारी, परासर है शरण तिहारी।
हां ए अंबा सुबुद्धि देवो माय। दधिमथी। 12।
वेद पुराणा में महिमा गाई ब्रह्मा विष्णु पार न पाई।
हां ए अंबा महिमा तेरी अपार। दधिमथी। 13।
बालाराम है शरण तिहारी।
हां ए अंबा मन चिता फल पाया। दधिमथी। 14।

❀❀❀❀❀

स्तुति

धरूँ चरण कमल को ध्यान देवो वरदान,
मोहे शिव रानी जय जय जगदंब भवानी।
मस्तक पर मुकुट करता चमचम,
पैरों में पायल करती रिमझिम।
हे कोटि सूर्य से तेज चमक रही साड़ी। जय....
तूं नव दुर्गा तारा काली, दुष्टों का दमन करने वाली,
भक्तों की इच्छा पूर्ण कर मनमानी। जय....
कर मांय खड़ग खप्पर भाला, वाहन सोहे सिंह मतवाला,
ब्रह्मा विष्णु महेश वन भैरव है अगवानी। जय.....
विधि से पूजन करता चित्त से,
भक्तों का भंडार भरो वित्त से
अब करो महर जग जननी बन सेठानी। जय.......
जग में अद्‌भुत तेरी मायया, वेदों ने पार नहीं पाया,
थक गये खोजकर बड़े बड़े ऋषि मुनि ज्ञानी। जय........
भक्तों का कारज सिद्ध करना, मैया लीना तेरा ही शरणा,

अब नेक नजर कर देखो, मैया भक्तों के कानी। जय....
ये नरसिंह मंडल का कहना है, भगवती भरोसे रहना है।
गावे बद्री बिस्सा जीवन व्यास रतानी। जय.....

❀❀❀❀❀

मां दधिमती की आराधना

कर दधिमथी का ध्यान देवो वरदान,
जगत कल्याणी, जय जय जगदंबा भवानी।
तूं मांगलोद की है माता, यश सकल विश्व में प्रख्याता,
तूं चमक रही ज्यों सूर्य तेज महारानी। जय।
मस्तक पर छत्र तेरे छाजे, सिंह वाहन अद्‌भुत राजे।
कर सोहे तेरे त्रिखंड त्रिशूल भवानी। जय।
अधर खंभ है अति भारी, मंदिर की शोभा है न्यारी,
यज्ञ कुंड का है अमृत पानी। जय।
तू दुर्गा दधिमथी महामाया, भक्तों ने तेरा यश गाया,
थक गए खोजते तुमको मुनिवर ज्ञानी। जय।
मैया अद्‌भुत तेरी माया, वेदों ने भी पार नहीं पाया।
सेवत तुझको हरदम ऋषि मुनि ज्ञानी। जय।
सब देशों से सेवक आते, मन वांछित फल वे है पाते,
दर्शन से हो कल्याण, तेरे ब्रह्माणी। जय।
असोज चैत्र मेला भरता, निश दिन अखंड दीपक जगता,
वजती हैं नोपत द्वार तेरे शिवरानी। जय।
भक्तों का कारज सिद्ध करना, हम आए हैं तेरी शरण,
संकट सब विघ्न हरो, दधिमथी कहारानी। जय।
नित पूजन करता जो मन से संपन्न होय सुख अरू धन से,
सकल सिद्धि नव निधि की हो तुम दानी। जय।
दाहिमा सभा का कहना है दधिमथी भरोसे रहना है,
दाधीच रतन करे विनती जय जय जननी। जय।

❀❀❀❀❀

दधिमथी मां से प्रार्थना

दरशन दधिमत मात दीरांई जो,
हित चित ध्यान धरीजो भवानी को।
मांगलोद में विराजे गण ज्यूं गाते नोपत बाजे मैया,
शब्द हुयो छः सुरवानी को 2 हां ए अंबे। दरशन।
उदयपुर से आयौ परचौ पायौ मंदिर चिणायो ए राणो,
होद खिणायो ए मीठा पानी को, हां ए अंबे। दरशन।
चार चौक जहां बनी तिवारी, वहां सोहे फुलवारी ए माता,
मोटो परकोटो शिखर कवाणी को, हां ए अंबे। दरशन।
सेवक नित सेवे दरशन पावे भोग लगावे ए माता,
मुकुट जड़ाऊ ब्रह्माणी को, हां ए अंबे। दरशन।
पोल चार, जहां खुली जो बारी, हो बणयो गुलजारो ए अंबे,
नर नारी पीवे छ अमृत पानी को, हां ए अंबे। दरशन।
होम कुंड की छवि है न्यारी बड़ा ब्रह्मचारी ए अंबे।
ध्यान धरे छ ब्रह्माणी को, हां ए अंबे। दरशन।
कालूराव पर कृपा कीजो, दरशन दीजो, मान बढ़ाज्यो ए अंबे,
ध्यान धरे छ ब्रह्माणी को, हां ए अंबे। दरशन।

❀❀❀❀❀

दधिमती मातेश्वरी का छन्द

छन्द गुण दधमथ का गाता, सकल की साय करो माता। टेर।
दधिमथी मोटी महा माई, महर कर गोठ नगर में आई।
गवाल्यो चरावत गाई, कहयो तुम बोलो मत भाई।
अभी मैं बाहिर जो आऊँ, लोक में संपत वपराऊँ।
दधिमथी बाहर निसरी, धुन्ध भई दिन रैन।
हुई आवाज सिंह की, भिड़क भाग गई धेन।
गवालो गऊ घेर लाता, सकल की साय करो माता।
गवालो हो हो कर रयो, बचन देवी को भूल गयो।
तभी देवी बाहर नहीं आई, गुप्त एक मस्तक पुजवाई।
दधमथ की सेवा करे, जो कोई नर और नार।
निश्चय होकर धरे ध्यान, तो बेड़ा कर दे पार।

दुख दरिद्र दूर जाता, सकल की साय करो माता। छन्द।
गोठ एक मांगलोद मांई, बिराजे दधिमथी महामाई।
जंगल में देबल असमानी, उसी को जाणे सब प्राणी।
छत्र बिराजे सोहनो, चार भुजा गल हार।
कानां कुंडल झिल मिले, आप सिंह असवार।
नोपतां बाज रही दिन रातां, सकल की साय करो माता। छन्द।
परचो एक साहुकार पायो, मात को देवल चिणवायो।
पोल ईक सूरज के सामी, कुंड का अमृत है पानी।
अधर खंभ ऐसो बणियों, जाणत सब है जान।
कलयुग में छिप जावसी, कोई सतयुग को सेनाण।
कलयुग में करत लोग बातां, सकल की साय करो माता। छन्द।
परचो ईह पाली नो राणो, उदयपुर मेवाड़ी जाणो।
कारज उसका भी सिद्ध कीनो, वचन से पुत्र देय दीनो।
सूतां सपनो आइयो, जाग सके तो जाग।
देऊँ गढ़ चित्तोड़ कास, थारे मेटूँ दिल का दाग।
द्रव्य ईक जूना भी पाता, सकल की सहाय करो माता। छन्द।
रात का राणोजी उठ जाग्यो, मात के पांवा उठ लाग्यो।
माता को अखी वचन पाऊँ, देश में देवल चिनवाऊँ।
जब देवी का हुकुम सूं, आयो देश दिवाण।
मंदिर चिणवाया, भूप सूं ऊँचा किया निर्वाण।
कुंड के पेड़ी बंधवाता, सकल की साय करो माता। छन्द।
सेवक नित सेवा ही करता, ध्यान श्री दधिमथ का धरता।
पाराशर वंश थारी कर आरती नित उठ भोग लगाता।
जोगण्या निरत करत भैरूँ डमाक डम बाजत है डमरूँ।
मारवाड़ के मायने प्रकट भई है गोठ।
आपो आप बिराजे जननी, बाहर निकली जोत।
जातरी रात दिन आता, सकल की साय करो माता। छन्द।
सम्वत् है उन्नीसो दस में, छन्द गुण गायो रंग रस में।
चौथ सुद श्रावण के मासा, सकल की पूरो मन आशा।
दसरावो मेलो भरेसजी, चैत्र आसोजां माय।
देश देश का आवे जातरी, पूरे मन की आश।

अन्न धन दीजो माता, सकल की साय करो माता। छन्द।
माता को नंद छंद गायो, माता के चरणां चित लायो।
जो जन गावे अरू सुणे, निश दिन धरे जो ध्यान।
गुरू बड़ा गुणवान है मूलचंद महाराज।
जोड़कर जेठमल गाता सकल की साय करो माता। छन्द।

❀❀❀❀❀
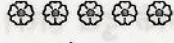
दुर्गा स्तुति

(तर्ज– करमा बाई को खीचड़लो)

मैया दीजो जी प्रसादी हाथ बढ़ाय बाहर उबा टाबरिया। टेर।
मैं तो थारा टाबर टूबर तू छः म्हारी माय।
कुल देवी जगदंबा अंबा लुल लुल लागूं पाय।
अंबा दीजो जी चरणामृत अमृतधारा। बाहर।
चरणामृत चरणोदक दीजो, केशर चन्दन साथ।
दूध पतासा मिसरी दीजो, मीठा रहसी हाथ।
अंबा दीजो जी मेवारा, भर भर थाल। बाहर।
अन्न धन रा भंडार भरी जो, लक्ष्मी दीजो अपार।
सभी रकम की वस्तुएं मैया, घर में दीजो बसाय।
अंबा दीजो जी सोनारो, नोसर हार। बाहर।
थारा चरणा री भक्ति दीजो, चोखो दीजो ज्ञान।
भरी सभा पंचो में मैया, म्हारो राखजो मान।
मैया. दीजो जी नैना री ज्योति अपार। बाहर।
टाबरिया ने गोद झडूलो देव बुलावो आप।
अत्रिय दास शरण में थारी, भूल करीजो माफ
अंबा दीजो जी चरणा भक्ति अपार। बाहर।

❀❀❀❀❀

मां अंबाजी की आरती

जय अम्बे गौरी ,मैया जय श्यामा गौरी।
तुमको निशदिन ध्यावत,हरि ब्रह्मा शिवजी।।

मांग सिंदूर विराजत,टीको मृगमद को।
उज्जवल से दोउ नैना, चद्रवनद नीको ।2। जय अम्बे.।
कनक समान कलेवर रक्ताम्बर राजे।
रक्त–पुष्प गल माला, कण्ठनपर साजे ।3। जय अम्बे.।
केहरी वानर राजत,खड़ग खपर धारी।
सुर नर मुनि जन सेवत ,तिनके दुख हारी। 4। जय अंबे।
कानन कुण्डल शोभित,नासाग्रे मोती
कोटिक चन्द्र दिवाकर,राजत सम ज्योति। 5। जय अंबे।
शुम्भ निशुम्भ विदारे ,महिषासुर घाती।
धूम्रविलोचन नैना निशिदिन मदमाती ।6। जय अम्बे.।
चण्ड मुण्ड संहारे, शोषितबीज हरे।
मधु कैटभ दोउ मारे, सुर भयहीन करे ।7। जय अम्बे.।
ब्रह्माषी, रूद्राषी, तुम कमला रानी।
आगम–निगम–बखानी, तुम शिव पटरानी ।8। जय अम्बे।
चौसठ योगिन गावत, नृत्य करत भैरूँ।
बाजत ताल मृदंगा औ बाजत डमरू ।9। जय अम्बे.।
तुम ही जगकी माता, तुम ही हो भरता।
भक्तन की दुख हरता सुख सम्पति करता ।10। जयअम्बे।
भुजा चार अति शोभित,वर मुद्रा धारी।
मनवान्छित फल पावत, सेवत नर–नारी ।11। जय अम्बे।
कंचन थाल विराजत अमर कपुर बाती।
(श्री) माल केतु में राजत कोटिरतन ज्योति ।12 ।जय अम्बे.।
(श्री) अम्बेजी की आरति जो कोई नर गावै।
ज्यारां पाप परा जावे, ज्यारे घर लक्ष्मी आवे, ज्यारे नव निध होय जावे।
कहत शिवानंद स्वामी, सुख सम्पति पावे ।13। जयअम्बे.

श्री दधिमथी माताजी की पोढ़णा

पोढ़ो पोढ़ो दधिमथी माई, अखियों में नींद छाई।
कंचन मणि का पलंग सजत है, रेशम बाण बनाई।
जिस पर गलीचा, सिरख परथना पुष्पन सेज बिछाई।
अब पोढ़न का वक्त हुआ है, मुख उबासी आई।

दूध पान कर शयन कीजिये, आद्य शक्ति महामाई।
आदि अनादि तू ही जग जननी, गति तेरी लखियन जाई।
यंटा पुष्पनकी सेज बछत, दूनपान जिसमें अत्रदान छिड़वाई।
कहे गणेश कर जोड़ भगवती, हित चित में यश गाई।
पोढ़ो पोढ़ो दधिमथी माई, अंखियों में नींद आई।

❁❁❁❁❁

आरती ज्वाला कालीदेवी की

मंगल की सेवा सुन मेरी देवा हाथ जोड़ तेरे द्वार खड़े।
पान सुपारी ध्वजा नारियल ले ज्वाला तेरी भेंट खड़े। टेर।
सुन जगदंबा न कर विलंबा संतन के भंडार भरे।
सन्तन प्रति पाली सदा खुशहाली जय काली कल्याण करे।
बुद्ध विधाता तू जग माता, मेरा कारज सिद्ध करे।
चरण कमल का लिया आसरा, शरण तुम्हारी आन परे।
जब जब भीड़ भक्तन पर तब तब आय सहाय करे। संतन।
बार बार ते सब जग मोहा, तरुणी रूप अनूप धरे।
माता होकर पुत्र खिलावे, भार्या होकर भोग करे।
संतन सुख दाई सदा सहाई सन्त खड़े जयकार करे। संतन।
ब्रह्मा विष्णु महेश सहस्र फल लिये भेंट तेरे द्वार खड़े।
अटल सिंहासन बैठी माता सिर सोने का छत्र फिरे। संतन।
बार शनिश्चर कुम्कुम वरणी जब लंकड़ को हुक्म करे।
खड्ग खप्पर त्रिशूल हाथ लिए रक्त बीज को भस्म करें।
शुम्भ निशुम्भ पछाड़ी माता महिषासुर को पकड़ दले। संतन।
आदित अबतर आप को वीरा, अपने जन को कष्ट करे।
कुपित होयकर दानव मारे, चंड मुंड सब चूर करें।
जब तुम देखो दया रूप होय पल में संकट दूर टरें। सन्तन।
सोम्य स्वभाव धरियों मेरी माता जन की अरज कबूल करे।
सिंह पीठ पर चढ़ो भवानी तीन भवन का राज करे।
दर्शन पावे मंगल गावें सिद्ध साधक वर तेरी भेंट धरे। सन्तन।
ब्रह्मा वेद पढ़े तेरे द्वारे शिव शंकर हरि ध्यान धरे।
इन्द्र कृष्ण तेरी आरती करे, चंवर कुबेर ढुलाय रहे।

जय जननी जस मात भवानी अटल में राज्य करे। सन्तन।

❀❀❀❀❀

बटुक भैरव की आरती

ओ३म् जय भैरव देवा, प्रभु जय भैरव देवा,
जय काल अरू गोरा, कृत देवी सेवा। ओ३म्।
तुम्हीं आय सुधारक, दुःख सिन्धुतारक,
भक्तों के भय हारक, भीषण वपु धारक। ओ३म्।
वाहन श्वान विराजत, की त्रिशूल धारी,
महिमा अमित तुम्हारी, जय जय दुख हारी। ओ३म्।
तब बिन देवी पूजा, सफल नहीं होवे,
चतुवर्तिका दायक, दर्शन दुःख खोये। ओ३म्।
तैल तटक दधि मिश्रित, भाव बली तेरी।
कृपा करो जय भैरव, करिये नहीं देरी। ओ३म्।
पांव घूंघरे बाजत डमरू, डमकावत।
बटुक नाथ वन बालक जन मन हरषावत। ओ३म्।
बटुक नाथ की आरती जो कोई गावे।
कह धरणीधर वर नर वांछित फल पावे। ओ३म्।

❀❀❀❀❀

मां दधिमथी का भजन

झालर शंख नगारा बाजे रे,
मांगलोद के कांकड़,में जगदम्बे विराजे रे।
सूरज सामी दोय पोल भैरूजी का स्थान,
दूजी पोल में गजानन्द बाबो, अंजनी का हनुमान,
दरशन से दुखड़ा भाजे रे। 1।
मंदिर मूंडा के बावड़ी ज्याँ को निरमल नीर,

राणाजी ने परच्यो दीनो, कंचन हुआ शरीर,
मंड में नोपत बाजे रे। 2।
सुन्दर शिखर बण्यो है भारी अधर खंभ है एक,
ब्रह्मा, विष्णु मोहित होगा देख मंदिर की टेक,
निज मंदिर की शोभा छाजे रे। 3।
पंडितजी तो यज्ञ करावे, सेवक साजे सेवा,
कोई चढ़ावे लाडू चुरमा कोई चढ़ावे मेवा,
शक्ति के भोग लगावे रे। 4।
चैत्र सुदी आठम के दिन माताजी को मेलो,
दूर देश का आवे यात्री होय दायमों भेलो,
भीड़ भड़ाका माचे रे। 5।
यज्ञ कुंड की महिमा कहूं काई ज्यांको नीरमल नीर,
चैत्र सुदी नवमी को मेलो गंगाजी की सीर,
पेढ़यां ऊपर नावे ज्यांकी पीड़ा भागे रे। 6।
आज भवानी दरशन दिना मज मंदिर के बीच,
माताजी की महिमा गावे पूनमचंद दाधिच,
पगा में बांध गूंगरा नाचे रे। 7।

❀❀❀❀❀

अथ दधित्या वृक प्रारंभ

शुभ गोठ मांगलोद पुरी मरू देश के मांय निवास करे,
बने मांय बसे बहु खेजढिया नी खोदत खड़प कई गाड़ा भरे,
बहु दूर सूं देवल्यो चमके शिखरा पर सोने का कलश धरे।
कह रामप्रताप भजो दुनियां दधिमय रानी कारज सिध करें।
भूमि काट के छाट लियां प्रगटी बहु तेज के नूत्र विशाल धरे,
मुख तेज मनोहर पुष्ट लगे गल से आधा भाग भूमि विचरे,
ये पाताल के दैत्यर दानव को जगदंबा पगों से सदाय चर। कह।
नथ केशर के नग बोत जड़े साड़ी बीच रतन सदा ही धरे,
गल माय विशाल धरयो तमन्यो फिर कंठी जड़ाऊँ श्रृंगार करे,

जरि घाघरो रेशम को चिमके लयी घोखरू औरणी धोरा धरे। कह।
दोय सिंह से बैठा के रखा दिन रात हमेश्यां जोत जरें,
छत्र छोटा छडी नित चंवर ढूले जहां पंडा विधान सु पूजा करें,
बहु शोभित अंब को मंडप है जहां शोडष स्तंभ विशाल धरे। कह।
दरवाजा कपाट का ठाठ बड़ा परकोटा से बुर्ज विशाल धरे,
जहां च्यारू ही चौक जड़े फिर च्यार दिशा में चोकाड़ा सरे,
लघु मंडप में दोहि कुंड विषे द्विज वेद विधान सूं होम करे। कह।
बुर्जो पे छत्रि झरोखा जुके फिर चान्दनिया अति लंबी शरे,
चड़ लोक हजारो बिलोकत है जहां कोटरिया में निवास करे,
जिन मेलों में लाखों रा माल बिके अरू लाखों ही लोग जहां बिचरे। कह।
जल ठाट जहां जगदंबा कृपा कोई बाग बगीचों में पुष्प सरें,
जहां कूप में प्याऊ भरौज वरी नर टंकी के टूटीयां से पानी भरे,
फिर कुंड ये जुँड मनुष्यन कर नर नारी हजारों ही स्नान करें। कह।
ऋषि विष्णु ही दास दाधीच भए महाराना कुंजा उपदेश करे,
रूपयए लाखों लगा कमठांण रच्या वन मांय किला महलात धरे,
करो आय मुनि महाराज निगा यहां चांदी किवाड़ ईनोने करे। कह।
एक बारया धार के दीश भुजा कर खड़ग खपर आप धरे,
खल संग चौसठ योगिनी खड़े दुर्गा नव कोटि जहां विचरे। कह।
खल शुंभ निशुम्भ कुमार हटा असमान को शोभित पान करे,
एक बार भई भुवि झरति प्रभु आप अंबजी कु आज्ञा करें,
ब्रजजा जगदंब सु कार्य करो खल ब्रज माय हरी अवतंश धरे। कह।
अगणि से सन्यासी कि साल विषे सुद सप्तमी चेत्र की अर्ज करे,
त्रिहिपाठी आसोपा या गंगापुर का सुत केवलराम ये उचरे,
सब शत्रु हटाकर वंश बढ़ा कुल देवजी द्रव्य भंडार भरे। कह।
कह रामप्रताप भजो दुनिया दधिमथनी कारज सिद्ध करे। कह।

❀❀❀❀❀

मां दधिमथी की आरती

श्री कोटी चन्द्र भालिनी कपाल भाल धारणी,

कपूर गौर रूपणी अपार पाप त्यारणी।
अनाद्य रूप ईश्वरी, मुरज्य ब्रह्मा दायनी,
विरंच विष्णु ईश्वरी, कला कलाप शंकरी।
आनंद कोटि कालिका, कलाय नंदी मालिका,
तू ही सुबुद्धि बर्द्धनि, तू ही कुबुद्धि खंडनी।
सुबुद्धि सिद्धि दायनी,नमामि सिंह वाहिनी।
श्री विष्णु दास चरण शरण राखो हंस बाहिनी।

❀❀❀❀❀

क्षमा प्रार्थना

मंत्रहीन किया हीनं भक्तिहीनं जनार्दन,
यत्पुजितो मयादेवी परिपूर्ण तदस्तुमे।
यदक्षर पद भृष्टं मात्राहीनं च यद् भवेत,
तत्सर्वम् धम्यतां देवी प्रसीद परमेश्वरी।
सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः।।
गोठ मांगलोद वाली दधिमथी माताजी की आरती
जय गोठ नगर वाली, मैया जय गोठवाली।
दास जनों के संकट दूर करन वाली। जय गोठ।
जय अंबे जय दधिमथी, जय जय महतारी।
दोऊ कर जोड़याँ बिनहुं,अर्ज सुनो म्हारो। जय गोठ।
तू ही कमला तू ही लक्ष्मी, तू ही दधिमथी थल में।
सुमरत हाजिर होबो कष्ट हरो पल में। जय गोठ।
ध्यान धरणों राणा ने, परचो भल पायो।
महर भई मां थारी मंदिर चिणवायों। जय गोठ।
कुंड भरयो सागर सो, अटल जोती अंबा।
धजा फरूके नभ में, बिच अधर थम्भा। जय गोठ।
चैत्र आसोज नवरता, मेला हो भारी।
आवे अधिक दायमो, जाति नर नारी। जय गोठ।
हाथ जोड़ के हरदम, निशि वासर ध्यावें।

छगनलाल बल दबा, सुख सम्पत्ति चावै। जय गोठ।

❀❀❀❀❀

श्री दुर्गा स्तुति

सुन मेरी देवी पर्वत बासिनी तेरा पार न पाया। टेर।
पान सुपारी ध्वजा नारियल ले तेरी भेंट चढाया। सुन।
सुखा चोली तेरे अंग बिराजे केशर तिलक लगाया। सुन।
नंगे पग तेरे अकबर आया सोने का छत्र चढ़ाया। सुन।
ऊँचे ऊँचे पयज बन्धों दिवला निच शहर बसाया। सुन।
सतयुग द्वापर त्रैता मध्ये कलियुग राज सवाया। सुन।
धूप दीप नैवैध आरती मोहन भोग लगाया। सुन।
धानू भगत मैया तेरे गुण गावे मन वांछित फल पावे। सुन।

❀❀❀❀❀

माताजी की कीर्ति

गवरी का पुत्र गणपत महाराजा, राखी सभा में म्हारी थे लाजा।
सारा तो पहली थाने मैं ध्याऊँ, माता दधिमथी की कीर्ति मैं गाऊँ।
आद तो शक्ति विष्णु मम्बाई, ऋषि अथर्वा के पुत्री हो आई।
दाधीच कुल की मोटी मम्बाई, बेन दधिमत दाधीच भाई।
वंश बडावण अवतार आई, माता शक्ति ने गोद खिलाई।
सतयुग त्रैता द्वापुर आगे से आई, आदि अनादि वेद को भाके।
देश मरूधर में नगर नागौर, तासू पूर्व कोस बारह अगुनो।
गोठ मांगलोद बीच प्रगटी मम्बाई, करते भक्तां की सदा ही सहाई।
प्रथम परचो चौहान दीनो, सारो समुद्र जन चांदी को कीनो।
मानो कुण खावन देशी मम्बाई, खान खडी की करी जद साई।
दान इन्द्र ने दाधीच दीनो, शरीर अपनो परमारथ कीनो।
सती ज्ञाना ने बात बिचारी, पति करी छ सुरपुर की प्यारी।

पति विहुनी नारी दुःख पावे, सती हो जाऊँ म्हारे मन भावे।
पेट पर नाल पीपलाद काडो, सती चित्ता में अखाड़ो माडो।
पड़ियो पीपलाद पीपल के मांही, पालन करने लक्ष्मीजी आई।
उटाय गोद में अभूत दीनो, शिशु पीपलाद माता कह दीनों।
माता तब प्रकट होने को धारी, पृथ्वी फाटी न छाई धुंधकारी।
शिखर समेत बायर तब आई, धेनु भीड़ कर दूर गई भाई।
ग्वालो करियो हो हो तब माई, तब ही तो देवी बाहर नहीं आई।
गुप्त एक मस्तक पुजवाई, शिखर गुफा में सज्जन एक रहता।
माता का दर्शन करता सुख लेता, एक दिन कुमति मन मांही छाई।
बैल चोरी कर लाओ एक भाई, पीछे से बार दौड़ी भी आई।
जाय गुफा में लुकियो वो भाई, बेग करनी माता अब आई।
बैल की गाय माता जब कोनी, भक्ति सज्जन की सकल में चीनी।
चोर चकारा जब ही कुआद, दर्शन करने दुनिया सुख पावे।
यज्ञ कुंड पिछे कुआब, जिन माही दुनिया सारी जो नावे।
बुध अष्टमी को जो कोई नावे, पाप जावे पुन्य कमावे।
धारा पुष्कर की जिन दीन आवे, कपाल पीठ वेदों में गाई।
राजा मानदाता यज्ञ ओ कीनो, दान श्रीरान गुप्त दीनों।
सनमुख सूरज बावड़ी भारी, अमृत नीर पीये नर नारी।
सातम की रात जगाया थारी, अष्टम को भोग धरे नर नारी।
काई मेला की करू बड़ाई, इतनी तो बुद्धी नहीं छ माई।
गांव दुगस्ताऊ वाला है तिलोक भाई, दर्शन को आवे नर और नारी।

❀❀❀❀❀

पुष्पांजली

ओ३म् यज्ञेन यज्ञमयजन्य देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन,
तेहनाकं महिमान सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।
ओ३म राजरधिराजाय प्रसह्य साहिने,
नमो वयं वेश्रवणाय कुर्महे।
स में कामान् काम कामाय मह्यम,

कामेश्वरो वैश्रवणो दधातु।
कुबेराय वैश्रवणाय महाराजय नमः।
ओ३म् स्वस्ति साम्राज्यं भोज्यं स्वराज्ये वेराज्ययं राज्यं,
महाराज्यमाधि पत्ययं समन्तपर्यायीस्यात् सार्वभोमः सार्वायुष,
अन्तादा परार्धातपृथि के समुद्र पर्यान्ताया एकरादितो।
तदप्येख श्लोको अभिगीतों सकलः परिवंष्टारो मरूत्तस्यावन ग्रही
आविक्षितस्य काम प्रष्विश्वे देवा सभासदः।।
पुष्पांजलि समर्पयामी।
कायेन बाचा मनसेन्द्रियैर्वा तुद्धयात्मनायानुस्त स्वभावात्।
करोमियद्यत् सकलन परस्मै नारायणयेति समर्पयेतत्।

❀❀❀❀❀

भगवती जगत् जननी दधिमथी की अवतरण कथा

सम्पूर्ण विश्व में अद्वितीय विश्वगुरूता प्राप्त करने का सौभाग्य केवल भारत भूमि को ही प्राप्त हुआ है। भारत भूमि देवताओं व मुनियों के प्रादुर्भाव से उर्वरा हुई, उनकी कृपा दुष्टि रूपी सुधा प्रवाह से सिक्त होकर अपने सभ्य एवं संस्कृति के विकसित कुसुमों के सौरभ से सभी के ह्रदय को चुराती है। देवों द्वारा भी स्तुति करने योग्य इस पुण्य भूमि पर महर्षि दधिची की पावन भागिनी महामाया भगवती दधिमथी भारत वर्ष के विभिन्न प्रान्तों में बसे लाखों दाधीच (दाहिमा) ब्राह्मणों की कुल देवी है। दाधीच ब्राह्मणों का कोई भी धार्मिक संस्कार बिना भगवती दधिमथी की पूंजा अर्चना के पूर्ण नहीं हो सकता । महामाया भगवती दधिमथी की पुण्य भूमि राजस्थान राज्यान्तर्गत नागौर मण्डल मारवाड़ प्रदेश (गोठ मांगलोद ग्राम) में दाधीच कुल देवी सर्वत्र अपनी अनुपम सुषमा बिखेर रही है एवं कुल देवी मंदिर दाधीच समाज का श्रद्धा केन्द्र है। अपनी मनौतियों, बच्चों का मुण्डन संस्कार, जात, जडूला हेतु दोनों नवरात्रियों सहित वर्ष भर श्रद्धालु यहां आते रहते है। मैया दधिमथी जिन श्रद्धालुओं की मनोकामना पूर्ण करती है वे मंदिर में थालियां (भोग) चढ़ाते है। यह मंदिर केवल समाज का केन्द्र बिन्दु ही नहीं अपितु अन्य

समाज को भी अपनी मनौतियां मांगते नजर आते है और मैया उन मनौतियों को पूर्ण भी करती है।

शेषनाग पर शयन करने वाले भगवान विष्णु के नाभिकमल से ब्रह्माजी उत्पन्न हुए। और उनके तपोबल से दस मानस पुत्र उत्पन्न हुए। उन दस पुत्रों में महर्षि अथर्वा ऋषि भी थे जो अथर्ववेद के प्रणेता माने जाते है। उन्होंने जल में बिना किसी अरणी मंथन के अग्नि का प्रादुर्भाव कर वैज्ञानिक ढंग से प्राणभूत ऊर्जा (हाइड्रोपावर) का आविष्कार किया। यह मानव विकास के इतिहास में उनका प्रथम वैज्ञानिक योगदान था। परम तेजस्वी अथर्वा ऋषि का विवाह कदर्म मुनि की पुत्री शान्ता से हुआ। महर्षि अथर्वा की धर्मपरायणा पत्नी शांता ने भगवती लक्ष्मी की तपस्या की। योगमाया ने प्रसन्न होकर घर पर ही अवतरित होने की घोषणा की। और अवतरित होने का प्रयोजन इस प्रकार बताया– भगवती लक्ष्मी ने वरदान देते हुए कहा कि दैत्यराज विकटासुर का वध करने हेतु मैं तुम्हारे यहां पुत्री के रूप में जन्म लूंगी और देवताओं को अभय प्रदान करूंगी। महर्षि और शान्ता ऐसा वरदान पाकर बड़े प्रसन्न हुए। शांता देवी का गर्भ धारण। दशम मास में देवी स्वरूपा जगज्जननी नारायणी का जन्म हुआ। जन्म के समय अथर्वा ऋषि ने नारायणी नाम रखा और बाद में भगवती दधिमथी नाम पड़ा।

नवरात्रा का महत्व- कहा जाता है कि अथर्वा ऋषि के कोई सन्तान नहीं हुई। नवरात्रा में दोनों में संयम और नियम से परब्रह्मा स्वरूपिणी आद्यशक्ति दुर्गा की उपासना की। उपासना से दुर्गा प्रसन्न होकर उनकी वांछानुसार स्वयं उनके घर पुत्री के रूप में माघसुदी 7 गुरूवार को अवतीर्ण हुई। अथर्वा ऋषि ने पुत्री का नाम नारायणी रखा। और उन्हीं के घर भगवती की कृपा से भाद्रपद सुदी 8 को महर्षि दधिचि का जन्म हुआ। दाधीच मधुविधा और ब्रह्मविधा के प्रकाण्ड विद्वान थे।

दैत्यराज विकटासुर कथाः- सृष्टि के प्रारंभ में ही सुर और असुर शक्तियों का अस्तित्व रहा है। कहा जाता है कि सृष्टि स्वयं बन्दी बनाई गई शक्तियों को स्वयं प्राप्त करती है और उन शक्तियों को अवतार के माध्यम से लेती है। श्री लंका के राक्षसराज

रावण को मारने के लिए भगवान विष्णु राम के रूप में अवतरित हुए। मामा कंस को मारने के लिए भानजे श्री कृष्ण अवतरित हुए। शेषनाग अपने अपमान का बदला रावणात्मज मेघनाद से लेने के लिए दशरथ पुत्र लक्ष्मण के रूप में अवतरित हुआ। इसी प्रकार जब आसुरी शक्तियों नभोमंडल और पृथ्वीमंडल पर अपना रूप दिखाती है तब तब देव शक्तियों को अवतरित होना पड़ता है। इसी प्रयोजन से महामाया दुर्गा रूप नारायणी का जन्म भी निष्फल नहीं हुआ है।

उस समय आसुरी शक्ति के प्रतिनिधि दैत्यराज विकटासुर ने कठोर तपस्या करके ब्रह्माजी से अमरता का वरदान मांगा। किन्तु मृत्यु तो अवश्यम्भावी है। मृत्यु से कोई नहीं बच सकता। अतः स्त्री को छोड़कर अजेयता का वरदान ब्रह्माजी ने दे दिया। वरदान पाकर दैत्यराज का आसुरी बल और अधिक बढ़ गया। उसने तीनों लोकों (स्वर्गलोक, पृथ्वीलोक,पाताल लोक,) दसों दिशाओं के दिक्पालों और सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि, वायु को अपने बस में कर लिया। स्वर्गलोक को जीतकर देवताओं को राजश्री हीन कर दिया। आसुरी व मायावी शक्ति के माध्यम से स्वयं ब्रह्माजी की ब्रह्मशक्ति भी छीन ली, जिससे सृष्टि निर्माण की प्रकिया अवरूद्ध हो गई। वह दुष्ट दानव अपने को अजेय समझने के कारण मैया की तपस्या में लीन ब्राह्मणों की हत्या करने लगा एवं तपस्या में अवरोध उत्पन्न करने लगा। उसे अपनी शक्ति पर इतना घमंड था कि शिव और विष्णु के मंदिरो को नष्ट करने लगा। इस प्रकार दैत्याराज विकटासुर के इशारे पर घृणित एवं कुत्सित कार्य एवं ब्राह्मणों का ब्राह्मणत्व छीन लिया। इससे सभी देवी देवता घोर संकट में पड़ गए। महाबली विकटासुर के आगमन से गुरू वृहस्पति ने देवताओं को परामर्श दिया कि इस समय यत्नपूर्वक प्राणों की रक्षा करने में ही कल्याण है। गुरू के वचनो को सुनकर देवतागण सपरिवार हिमालय की ओर प्रस्थान कर गये। देवताओं के पलायन के समाचार को सुन कर दानवो के हौसले और भी बुलंद हो गए। यहां पर भी देवताओं पर अत्याचार होने लगा। चारों और त्राहि त्राहि मच गई। देवताओं को अपनी देवत्व शक्ति से विश्वास डगमगाने लगा। दैत्यराज विकटासुर के अत्याचारों से त्रस्त सभी देवगण भगवान विष्णु की शरण में गए।

भगवान विष्णु ने देवताओं को आशवस्त करते हुए बताया कि विकटासुर का वध कर संसार में पुनः देव संस्कृति स्थापित करने एवं समस्त प्राणियों को अभय प्रदान करने के लिए योगमाया महालक्ष्मी भगवती नारायणी के रूप में महर्षि अथर्वा के घर में प्रकट हुई है। वही इस दैत्यराज का नाश करेगी। आप वहीं जावें। क्योंकि विकटासुर अपने अभिमान के वंशीभूत होकर ब्रह्माजी से केवल पुरूष से ही अभय मांगा था उसने कहा था कि मुझे स्त्रियों से कोई भय नहीं है तभी ब्रह्माजी ने तथास्तु कहें दिया।

भगवान विष्णु की बात सुनकर देवता लोग तत्काल की अथर्वा ऋषि के आश्रम पर पहुंचे। उन्होंने देखा कि अथर्वा ऋषि को आत्मजा महामाया माँ दधिमथी नारायणी पद्मासन पर प्रसन्न मुद्रा में विराजमान थी तब देवताओं ने बहुविध श्रद्धा एवं सम्मान सहित मां की पूजा और अर्चना की। और अपने आने का प्रयोजन बताया। देवताओं के आर्तनाद को सुनकर मां का हृदय द्रविभूत हो गया और विनीत स्वर में विकटासुर को मारने का आग्रह किया। और बोली कि अब डरने की बात नहीं है। मैं तुम्हारे शत्रु विकटासुर को मारकर तुम लोगों को निष्कंटक राज्य दूंगी।

देवताओं के प्रस्थान कर जाने के बाद में दधिमथी ने अभेद्य कवच सहित अस्त्र शस्त्र धारण किया और सिंह पर चढ़कर दैत्यराज विकटासुर का काम तमाम करने के उद्देश्य से राजहंस के समान श्वेत, शत्रुओं में भय उत्पन्न करने वाले शंख को देवी ने अपने मुखारविंद से बताया जो उस समय तीनों लोकों में महा कोलाहल मच गया। उसी समय देवी के वाहन शेर (सिंह) के मेघघटा गर्जना की। तो घोर गर्जना ने राक्षसों के प्राणों को कम्पायमान कर दिया। और भयभीत होकर रक्षा करो बचाओ आदि के स्वरों में विलाप करते हुए राक्षस गण अपने प्राण बचाने के लिए इधर उधर भागने लगे। तब विकटासुर ने अत्यन्त क्रोध ा में आकर अपना त्रिशूल उठाकर माँ को ललकारा। दैत्यराज विकटासुर अपनी सेना सहित हाथी पर लगे होदे पर सवार होकर युद्ध भूमि में उपस्थित हुआ। वह अत्यन्त घोर गर्जना के साथ युद्ध करने के लिए आगे बढ़ ही रहा था कि उसे अनेक अपशकुन एक साथ देखने को मिले

और अपना वरदान याद आया कि वह स्त्री जाति से ही मारा जा सकता है। तभी दधि समुद्र में छिप गया। स्वयं अथर्वानंदिनी ने सभी दिव्यास्त्रों सहित सिंह पर आरूढ़ होकर सप्त सिंधुओं का मंथन किया। इस प्रकार दधि समुद्र में छिपे विकटासुर पर अत्यन्त क्रोध के साथ अपना त्रिशूल फेंका जिससे राक्षस राज का शरीर धूम को गया, आंखे फट गई, जंघाएं खंड खंड होकर जा गिरी। तथा आंतडिया बाहर निकल गई।

इस प्रकार दधिसागर में विकटासुर का वध कर विजयोपरान्त समुद्र से उठती हुई मां का मुख इस प्रकार सुशोभित हुआ जैसे पूर्णमासी का चांद हो। मां ने दधि समुद्र का मंथन कर माघ शुक्ला अष्टमी को संध्या काल में विकटासुर का वध किया। यह तिथि जन्माष्टमी के नाम से विख्यात है। दैत्यराज विकटासुर का वध से देवताओं में हर्ष व्याप्त हुआ। देवताओं की खोई हुई शक्ति पुनः प्राप्त हुई। ब्रह्माजी का सृष्टि सृजन का कार्य पुनः सामान्य हुआ।

इस प्रकार..................

दधिमथी मैया का नामकरणः ब्रह्माजी ने दधि समुद्र का मंथन कर विकटासुर का वध करने वाली अथर्वानंदिनी का नाम दधिमथी रखा। और महर्षि अथर्वा को पुत्र प्राप्ति का वरदान दिया तथा भगवती दधिमथी अपने भाई के वंश की रक्षा करती हुई उनकी कुलदेवी होगी, यह आशीर्वाद भी दिया।

❀❀❀❀❀

परोपरकार पुण्याय पापाय परपीडनम् ऋषि दधिची का अवतार

दैत्यराज विकटासुर का वध करने पर ब्रह्माजी ने वरदान और आशीर्वाद दिये निम्नानुसार थेः– 1. दधि समुद्र का मंथन करने वाली नारायणी का नाम दधिमथी पड़ा। 2. ऋषि अथर्वा को पुत्र प्राप्ति और दधिमथी अपने भाई के वंश की रक्षा करते हुए उनकी कुल देवी होगी।

इस प्रकार भगवती दधिमथी का भाई व अथर्वा ऋषि का पुत्र दधिची ऋषि उत्पन्न हुए। जो कालान्तर में अथर्वा पुत्र महर्षि दधिची

द्वारा विश्व कल्याण एवं देश धर्म की रक्षा के लिए दैत्यराज वृत्तासुर के वध के लिए अपनी अस्थियों को देवताओं को प्रदान किया था। इसी अपूर्व त्याग को याद कर इससे शिक्षा ग्रहण करने के लिए भारत वर्ष में ही नहीं प्रवासी भारतीयों द्वारा भी विश्व के अनेक देशों में महर्षि दधिची जयन्ती मनाई जाती है। जो अधिकतर प्रतिवर्ष अगस्त माह के अंतिम सप्ताह में आती है। इसी दिन महर्षि दधिची की पावन मूर्ति को जल से पावन किया जाता है। और नानाप्रकार के देवताओं की सवारियां (शोभायात्रा) निकाली जाती है। और सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किया जाता है। एवं बुद्धिमान छात्रों को पारितोषिक पुरूस्कार प्रदान किया जाता है। और शपथ दिलाई जाती है कि संपूर्ण दाधीच समाज को अपने त्यागमय पिता दधीचि के कार्यो का अनुकरण करे। समाज को सुखी बनाये।

ऋषि अस्थिदान और दैत्यराज वृत्रासुर वध कथाः– सृष्टि कम के प्रारंभ में देवताओं का राज्य था पर दानवो की शक्ति बढ़ती गई और ब्रह्मा, विष्णु, महेश इन तीनों देव प्रमुखों का विश्वास व भक्ति से वरदान व आशीर्वाद प्राप्त करते रहे।

जिस प्रकार दधिमथी माता ने विकटासुर का वध किया उसी प्रकार महर्षि दधीचि की अस्थियों से बज्र बनाकर वृत्रासुर का वध किया गया। दैत्यराज वृत्रासुर ने तपस्या बल से वरदान प्राप्त किया और स्वर्गलोक, पाताल लोक, पृथ्वीलोक पर विचरण करने वाले जीवों को सताने लगा। स्वयं स्वर्ग लोक राजा इन्द्र को भी सता च्युत कर दिया। देवताओं का राजा इन्द्र भी देवताओं सहित अपने प्राणों के भय से इध र उधर छिपता फिर रहा था। उस समय विष्णु ने देवताओं को सलाह दी कि पृथ्वी लोक पर एक ऐसा ऋषि है जिनकी हड्डियां इतनी मजबूत है कि उनके बने आंसुओं से ही राक्षस राज एवं संपूर्ण राक्षसों का वध ा संभव है अन्यथा नहीं। इधर महर्षि दधिची ने भगवान शिव से वरदान प्राप्त कर रखा था कि वे किसी से मरे नहीं तथा उनके यहां से कोई निराश नहीं लोटते। समय बड़ा बलवान है। महर्षि दधिची का विश्व इतिहास में नाम अमर होना था इसी हेतु देवतागण स्वयं इन्द्रराज सहित भिखारी की तरह कुलपिता दधिची से अस्थिदान की मांग कर रहा है।

अपने वचनों की रक्षा करने हेतु ऋषि ने स्वयं ही मृत्यु का वरण किया और त्यागमय भावना को विश्व इतिहास में छोड़ गए। यह त्याग मात्र के लिए ही नहीं वरन् समस्त मानव जाति के लिए था। एक अपूर्व त्याग। देवताओं की गाय कहलाने वाली स्वयं कामधेनु ने ऋषि के हाड मांस को साफ किया। जिससे देवतागण बची हुई हड्डियों से आयुध बनाकर दैत्यराज वृत्रासुर को मार गिराया एवं संपूर्ण पृथ्वी को राक्षसों से मुक्त करके पुनः इन्द्रराज एवं देव संस्कृति की स्थापना हुई। परन्तु महर्षि ने अपना जीवन त्याग किया उस समय उनकी धर्म परायण पत्नी वेदवती गर्भवती थी। उस समय पुरानी मर्यादा के अनुसार धर्मपरायण पत्नी पति के पीछे सती हो जाती थी। सती होने की इच्छा वेदवती ने जताई पर देवताओं ने इस इच्छा का विरोध किया और कहा कि गर्भवती का सती होना पाप माना जाता है। तो वेदवती ने अपना अपूर्ण गर्भ पेट चीरकर निकाल दिया और वे स्वयं ऋषि की मिट्टी के साथ सती हो गई। और अपूर्ण बालक को अश्वस्थ (पीपल के पेड़) को सौंपते हुए बालक की रक्षा करने की प्रार्थना की। ऋषि पत्नी ने महामाया दधिमथी से भी प्रार्थना करते हुए कहा कि आप इस दाधीच कुल की रक्षा करे। आप ही कुल देवी है। कुलदेवी दधिमथी के सान्निध्य में पीपल वृक्ष के नीचे पलने के कारण महर्षि दधिची के इस पुत्र का नाम पिप्पलाद पड़ा। ब्राह्मणों में से एक जाति दाधीच उसी पिप्पलाद ऋषि की संताने है। तथा पिप्पलाद की रक्षा करने वाली उस दुर्गा को आज भी कुल देवी के रूप में पूजते है और मानते है। पिप्पलाद ऋषि की संताने (संपूर्ण दाधीच समाज) का उद्भवः–

पिप्पलाद एक तपोनिष्ठ महर्षि हुए। आपका विवाह चक्रवर्ती राजा अनरन्य की पुत्री पदमा से हुआ। उनके 12 तेजस्वी पुत्र हुए। और ये 12 पुत्र अपनी प्रतिभाओं का परिचय 10 दिशाओं में जाना जाता था।

12 पुत्र निम्न है– 1. बृहदवत्स 2. गौतम 3. भार्गव 4. भारद्वाज 5. कोच्छस 6. कश्न 7. शाण्डिल्य 8. अत्रि 9. पाराशर 10. कपिल 11. गर्ग 12.लघुवत्स। ये सभी बड़े विद्वान और तपस्वी हुए।

बहुतवत्स एवं गौतम का विवाह अंगिरा ऋषि की कन्याओं के साथ हुआ। बाकी 10 ऋषियों का विवाह देवशर्मा की कन्याओं से हुआ

और इस प्रकार 12 ऋषियों के 12–12 यानी 144 पुत्र हुए। ये बड़े ही तपस्वी एवं विद्वान थे। कुलदेवी भगवती दधिमथी की आराधना से इनका प्रभाव बढ़ता ही गया।

❁❁❁❁❁

श्री दधिमथीजी की आरती गोठ मांगलोद

जय दधिमथी माता, मैया जय दधिमथी माता।
सुख करणी दुःख हरणी, ईश्वर अन्नदाता।। ओ३म् जय।।
आदि शक्ति महाराणी, त्रिभुवन जग मता ऐ मैया।
प्रकट पाल जय करणी, सुर नर मुनि ध्याता।। ओ३म् जय।।
विष्णु पति तिहारो, शांति है माता ऐ मैया।
पिता अथर्व महर्षि, दधीचि मुनि भ्राता।। ओ३म् जय।।
सार चुरा विकटासुर, दधि बीच ले जाता ऐ मैया।
दधिमथी विकट विडारयो, करी जग सुख साता।। ओ३म् जय।।
प्रकट भई भू लोक में, मांगलोद माता ऐ मैया।
अटल ज्योति जगती है, दर्शन मन भाता।। ओ३म् जय।।
शीश छत्र सुवर्ण को विराजे, वसन सुरख राता ऐ मैया।
रूप अनूप देख कर, रति पती संकुचाता।। ओ३म् जय।।
देश देश के यात्री दर्श, करन आता ऐ मैया।
देख छवि माता की, चित्त सुख हो जाता।। ओ३म् जय।।
हुए निरंजन विधि से, वेद स्तुति गाता ऐ मैया।
चूरमा भोग लगाता, आचमन करवाता।। ओ३म् जय।।
चैत्र आसोज में मेला भरता, यात्री बहुत आता ऐ मैया।
महिमा वरणी न जावे, पार नहीं पाता।। ओ३म् जय।।
श्री दधिमथी जी की आरती, जो कोई नर गाता ऐ मैया।
कहे नंद कर जोड़े, भक्ति मुक्ति पाता।। ओ३म् जय।।

❁❁❁❁❁

अंबे स्तुति

जगदंबे अंबे महारानी सहाय करी जो ए।
शरणे आया सेवक ने मैया सहाय दीजो ए।। जगदम्बे अम्बे.......।।
महाकाली कलकते वाली तोय मनाऊँ ए।
पापी दुष्टों चांडाल ऊपर बदछो मारी जे ए।। जगदम्बे अम्बे.......।।
करज्यो जंगल में मंगल, म्हारी मात भवानी ए।
भूल्या चुक्या न सुध बुध दीजो मात भवानी ए।। जगदम्बे अम्बे....।।
गावे गिरधर गोपाल मैया दास तिहारो ए।
शरणे आया भक्तां पर मैया माहर करी जो ए।। जगदम्बे अम्बे......।।

❀❀❀❀❀

आरती मातेश्वरी की

आरती उतारूं जगदम्बे, मेरी भी तो स्वीकार करो।
चरणों में तो दास रहूं, स्वपने को मां साकार करो।।
न फूल न पाती पास मेरे, न दीप न बाती साथ मेरे।
दोनों हाथों से नमन मेरा, जगदम्बे माँ स्वीकार करो।।
अभिलाषा मेरी समझो मां, समझा दो मेरे इस मन को।
मैं भटक रहा हूं इधर उधर, राह बतलाना स्वीकार करो।।
सुख सम्पति देती है मैया, कष्टों को मिटाती है मैया।
मैं भजा करूं मैं जपा करूं, आशीष देना स्वीकार करो।।
विपदा मण्डराती रहती है, संकट भी मां कोशिश करे।
पाताल मेरा मंजूर नहीं, नभ पहुंचाना स्वीकार करो।।
स्वीकार करो ये पुष्प पँखुड़ी और गूंथी हुई माला को।
चप्पा चप्पा गूंज उठा, जय हो ज्वाला माता की।।

❀❀❀❀❀

जय भवानी

(तर्ज– टूटे हुए ख्वाबों ने हमकों........)

जगदम्बे भवानी माँ, चरणों में बिठाओ ना।

अम्बे अम्बे अर्दास सुनो, हिवड़े से लगावो ना।
मैं पतित पतंगा हूं, जैसा भी हूं तेरा हूं।
बिखरा हुआ गुलशन हूं, टूटा सा बसेरा हूं–2।
चरणों में जगह दे दो, मत दूर बिठाओ माँ।
अंबे अंबे अर्दास सुनो.................. ।। 1।।

यूं छोड़ मे मत जावो, घनघोर घटाओं में।
आंचल नं छुड़ावो मां, सुनसान सी राहों में–2।
ममतामयी जगजननी, इतना तो सताओ ना।
अंबे अंबे अर्दास सुनो.................. ।। 2।।

तेरे छत्र की छाया में, हमको भी पुकारो माँ।
जननी की तरां थोड़ा, हमको भी दुलारो माँ–2।
आखिर तो तुम्हारा हूं, रिश्ते न भालाओ ना।
अंबे अंबे अर्दास सुनो............................ ।। 3।।

ओ सर्व मंगल माँ, दुर्गा महारानी माँ।
कर जोड़ रमेश खड़ा है, जग कल्याणी माँ–2।
तेरे दरस के प्यासे हैं, दर्शन तो दिखाओ ना।
अंबे अंबे अर्दास सुनो............................ ।। 4।।

❀❀❀❀❀

भजन

तर्ज-ब्याव बीनणी बिलखूं मैं तो

दधिमथी माता बिलखा म्हें तो, कद थारा दर्शन पावाँ।
इतरी तो करी महर, साल में एकर तो मंदिर आवां। टेर।
गोठ मांगलोद बीच बिराज, माँ दधमन्ता कहलाये।
देश देश का आवे है, यात्री चरणों में शीश निवाये।
सब की मंशा पूरण करनी, म्हें सब थारा गुण गावां।
इतरी तो कर महर......................... ।। 1।।
ज्योत अखण्ड जल मिज मन्दिर, अधरखम्भ महिमा गाव।

इमरत नीर कुण्ड में भरियो, देव सिनान करण आव।
ध्वजा फरख असमाना मे– 2, निरख निरख म्हें हरषावां।
इतरी तो कर महर.......................।।2।।
हाथ जोड़कर कर करा चाकरी, रिद्धि सिद्धि सम्पत सारी।
नाच भैरूं गजानंद, बजरंगी भोला भण्डारी।
ढ़ोल नगाड़ा नौबत बाज–2, शोभा म्हें नहीं कह पावाँ।
इतरी तो कर महर.....................।।3।।
म्हाकी मरजी चल नहीं, तू चाव जद मिलणो होव।
माँ सलटाव काम घणेरा, टाबर पड़यो पड़यो रोव।
सुण ये मां म्हें टाबर थारा–2, तन छोड़ अब सिध जावाँ।
इतरी तो कर महर.......................।।4।।

❀❀❀❀❀

फरियाद

(तर्ज– एक तेरा साथ............)

माँ भवानी आ, तुम्हारे लाल ने पुकारा है।
देखो ना बे सहारा है। माँ भवानी आ....
दीन दुखियारा, दामन में है कांटे, नयन में नीर है।
साथ ना छोड़ो, दो पल भी जीवन में, ये कैसी पीर है।
तारो मेरी मां–2, तुम्हारा नाम भी तो तारा है।
देखो ना बे सहारा है। माँ भवानी आ....
ना मेरा कोई, जीवन में संगी है, न कोई साथ है।
लाल तेरा हूं, फिर भी अकेला हूं, निराली बात है।
रखियो सिर पर हाथ–2, मेरी माँ तूने क्यों बिसारा है।
देखो ना बे सहारा है। माँ भवानी आ....
दे दुखी अंबे हे, मात जगदम्बे, दुखों को दूर कर।
दे करम अच्छे, हम है तेरे बच्चे, नाम मशहूर कर।
अर्जी करता पेश–2, ये रमेश माँ तुम्हारा है।
देखो ना बे सहारा है। माँ भवानी आ....

❀❀❀❀❀

प्रार्थना

माँ अम्बे अरदास है, विनय करूँ कर जोर।
दीन हीन पावे सदा, तेरे चरणा ठोर।। भवानी.....
श्रीफल और मेवा लिए आऐ सकल जहान।
माँ अम्बे रानी सती, सदा करो कल्याण।। भवानी.....
दया करो अम्बे मेरी माँ, दूर करो अज्ञान।
गलती सभी बिसारियो, बालक आपनो जान।। भवानी.....
धीरज धर द्वारे तेरे, जो भी दुखिया आये।
झोली खुशियों से भरी, वापस लेकर जाए।। भवानी.....
मन से जो ध्याये सदा, सकल कष्ट कट आए।
कोढ़ी को काया मिले, निर्धन सम्पति पाए।। भवानी.....
थिरक थिरक नाचे सभी, बाजे ढ़ोल नगारे।
ममता की वर्षा सदा, हो तेरे दरबारे।। भवानी.....
मांगे इस दरबार में जोड़े हाथ रमेश।

❀❀❀❀❀

स्तुति

सेवक पगा उभाणो चाल, दधिमथी मां मिल जासी जी मिल जासी।
दधिमथी मां को धरले ध्यान, दधिमथी मां मिल जासी जी 2।।
तेरी पल पल छीजे हाड़, संकट कट जासी जी कट जासी।
तू गोठ मांगलोद नगरिया चाल, दधिमथी मां मिल जासी जी 2।।
भोर भयो क्यूं सो रहयो, इब उठ कर स्नान।। दधिमथी मां।।
रोली मोली चावल लेकर, दधिमथी मां के मंदिर चाल।। दधिमथी मां।।
दधिमथी मां को करले ध्यान, तेरो बेड़ा हो जागो पार।। दधिमथी मां।।

सीरो, चूरमो और पेड़ा नारियल, मोदक भरकर थाल।। दधिमथी मां।।
चार दिनों का मेलो छेलो, के काया को लाई।। दधिमथी मां।।
भीड़ देखकर डर मत जाइये, भीड़ घणी अपरम पार।। दधिमथी मां।।
दधिमथी मां 2 रटतो जो, कोई दधिमथी मां खड़ी तेरे पास।। दधिमथी मां।।
याद करे जद दौड़ो आये, तेरो संकट देवे काट।। दधिमथी मां।।
तू दधिमथी मां के मंदिर चाल, दधिमथी मां मिलजासी जी मिल जासी।।
तू गोठ मांगलोद नगरिया चाल, संकट कट जासी जी कट जासी।।
दधिमथी मां।।
सेवक रमेश चन्द पगा उबाणों चाल, दधिमथी मां मिल जासी जी मिल जासी।।

❀❀❀❀❀

नवार्ण मन्त्र प्रकाश गीतिका

(गजल कव्वाली ताल कहरवा)

ओंकार आदि मंत्रो की ईश्वरी तुम ही हो।
ऐ अम्बे! अधमात्रा सिर पर धरो तुम ही हो।। 1।।
न्हीं शून्य रूप वाली मेघा दया क्षमा हो।
ल्कीं बिन्दु नादिनी हो कामेश्वरी रभा हो।। 2।।
चाम्पेय गौर अभायुत देह धारिणी हो।
मुण्डादि दानवों की प्राणपहारिणी हो।। 3।।
डाढ़े कराल धरती पर तुम उग्र कालिका हो।
ये सी विभक्ति रूपी तुम शब्द पालिका हो।। 4।।
विद्या तुम्हीं परा हो आनंदकारिणी हो।
चेतन हो हरिहरादिक के नाम धारणी हो।। 5।।
तुम तो सभी चराचर दिन रात ध्या रहे हैं।
है धन्य तुम्हारे गुण गान गा रहे है।। 6।।

❀❀❀❀❀

स्तुति

दधिमथी माता को सुमरण कर ले, भव से पार उतर जासी।
दधिमथी माता ने सुमरण कर ले, तेरा संकट कट जासी।।
दधिमथी माता को शरणों ले ले, नहीं कलयुग में बह जासी।
मिनख जमारो अमोलख खोवे, फिर कुण जाणे कद आसी।।
कंचन का कोठार भरया छ, इक दिन ताला खुल जासी।। दधिमथी.।।
कुटुम्ब कबीला सब मतलब का, एक न थारे संग जासी।
मात पिता पुत्र और नारी, सब है मतलब का साथी।।
धन जीवन को रंग छ फीको पल में रंग उतर जासी।। दधिमथी.।।

❀❀❀❀❀

चतुर्थोऽध्यायः

ध्यानम्

ओ३म् कालाभ्राभां कटाक्षैररिकुलभयदां मौलिबद्धेन्दुरेखां
शङ्खं चक्रं कृपाणं त्रिशिखमपि करैरूद्वहन्तीं त्रिनेत्राम्।
सिंहस्कन्धाधिरूढ़ां त्रिभुवनमखिलं तेजसा पूरयन्तीं
ध्यायेद् दुर्गां जयाख्यां त्रिदशपरिवृतां सेवितां सिद्धिकामैः।।
ओ३म् ऋषिरुवाच।। 1।।
शक्रादयः सुरगणा निहतेऽतिवीर्ये
तस्मिन्दुरात्मनि सुरारिबले च देव्या।
तां तुष्टुवुः प्रणतिनम्रशिरोधरांसा
वाग्भिः प्रहर्षपुलकोद्गमचारूदेहाः।।
देव्या यया ततमिदं जगदात्मशक्तया
निश्शेषदेवगणशक्तिसमूहमूर्त्या
तामम्बिकामखिलदेवमहर्षिपूज्यां
भक्त्या नताः स्म विदधातु शुभानि सा नः।।
यस्याः प्रभावमतुलं भगवाननन्तो

ब्रह्मा हरश्च न हि वक्तुमलं बलं च।

सा चण्डिकाखिलजगत्परिपालनाय
नाशाय चाशुभभयस्य मतिं करोतु।।
या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मीः
पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः।
श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य लज्जा
तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि विश्वम्।।
किं वर्णयाम तव रूपमचिन्त्यमेतत्
किं चातवीर्यमसुरक्षयकारि भूरि।
किं चाहवेषु चरितानि तवाद्भुतानि
सर्वेषु देव्यसुरदेवगणादिकेषु।।
हेतुः समस्तजगतां त्रिगुणापि दोषै–
र्न ज्ञायसे हरिहरादिभिरप्यपारा।
सर्वाश्रयाखिलमिदं जगदंशभूत–
मव्याकृता हि परमा प्रकतिस्त्वमाद्या।।
यस्याः समस्तसुरता समुदीरणेन
तृप्तिं प्रयाति सकलेषु मखेषु देवि।
स्वाहासि वै पितृगणस्य च तृप्तिहेतु–
रूच्चार्यसे त्वमत एव जनैः स्वधा च।।
या मुक्तिहेतुरविचिन्त्यमहाव्रता त्व–
मभ्यस्यसे सुनियतेन्द्रियतत्वसारैः।
मोक्षार्थिभिर्मुनिभिरस्तसमस्तदोषै–
र्विद्यासि सा भगवती परमा हि देवि।।
शब्दात्मिका सुविमलर्ग्यजुषां निधान–
मुद्गीथरम्यपदपाठवतां च साम्नाम्।
देवी त्रयी भगवती भवभावनाय
वार्ता च सर्वजगतां परमार्तिहन्त्री।।
मेधासि देवि विदिताखिलशास्त्रसारा
दुर्गासि दुर्गभवसागरनौरसङ्ग।
श्रीः कैटभारिहृदयैककृताधिवासा

गौरी त्वमेव शशिमौलिकृतप्रतिष्ठा।।
ईषत्सहासममलं परिपूर्णचन्द्र–
बिम्बानुकारि कनकोत्तमकान्तिकान्तम्।
अत्युद्भुतं प्रहृतमात्तरूषा तथापि
वक्त्रं विलोक्य सहसा महिषासुरेण।।
दृष्टवा तु देवि कुपितं भ्रुकुटीकराल–
मुद्यच्छशाङ्कसदृशच्छवि यन्न सद्यः।
प्राणान्मुमोच महिषस्तदतीव चित्रं
कैर्जीव्यते हि कुपितान्तकदर्शनेन।।
देवी प्रसीद परमा भवती भवाय
सद्यो विनाशयसि कोपवती कुलानि।
विज्ञातमैतदधुनैव यदस्तमेत–
न्नीतं बलं सुविपुलं महिषासुरस्य।।
ते सम्मता जनपदेषु धनानि तेषां
तेषां यशांसि न च सीदति धर्मवर्गः।
धन्यास्त एव निभृतात्मजभृत्यदारा
येषां सदाभ्युदयदा भवती प्रसन्ना।।
धर्म्याणि देवि सकलानि सदैव कर्मा–
ण्यत्यादृतः प्रतिदिनं सुकृति करोति।
स्वर्गं प्रयाति च ततो भवती प्रसादा–
ल्लोकत्रयेऽपि फलदा ननु देवि तेन।।
दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि।
दारिद्रयदुःखभयहारिणी का त्वदन्या
सर्वोपकारकरणाय सदाऽऽर्द्रचिता।।
एभिर्हतैर्जगदुपैति सुखं तथैते
कुर्वन्तु नाम नरकाय चिराय पापम्।
संग्राममृत्युमधिगम्य दिवं प्रयान्तु
मत्वेति नूनमहितान् विनिहंसि देवि।।
दृष्ट्वैव किं न भवती प्रकरोति भस्म

सर्वासुरानरिषु यत्प्रहिणोषि शस्त्रम्।
लोकान् प्रयान्तु रिपवोऽपि हि शस्त्रपूता
इत्थं मतिर्भवति तेष्वपि तेऽतिसाध्वी।।
खड्गप्रभानिकरविस्फुरणैस्तथोग्रैः
शूलाग्रकान्तिनिवहेन दृशोऽसुराणाम्।
यन्नागता विलयमंशुमदिन्दुखण्ड–
योग्याननं तव विलोयतां तदेतत्।।
दुर्वृतवृतशमनं तव देवि शीलं
रूपं तथैतदविचिन्त्यमतुल्यमन्यैः
वीर्यं च हन्तृ हृतदेवपराक्रमाणां
वैरिष्विपि प्रकटितैव दया त्वयेत्थम्।।
केनोपमा भवतु तेऽस्य पराक्रमस्य
रूपं च शत्रुभयकार्यतिहारि कुत्र।
चित्ते कृपा समरनिष्ठुरता च दृष्टा।
त्वय्येव देवि वरदे भुवनत्रयेऽपि।।
त्रैलोक्यमेतदखिलं रिपुनाशनेन
त्रातं त्वया समरमूर्धनि तेऽपि हत्वा।
नीता दिवं रिपुगणा भयमप्यपास्त–
मस्माकमुन्मदसुरारिभवं नमस्ते।।
शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके।
घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिः स्वनेन च।।
प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे।
भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि।।
सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते।
यानि चात्यर्थघोराणि तै रक्षास्तांस्तथा भुवम्।।
खड़गशूलगदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके।
करपल्लवसङ्गीनी तैरस्मान् रक्ष सर्वतः।।

(ऋषिरुवाच)

एवं स्तुता सुरैर्दिव्यैः कुसुमैर्नन्दनोद्भवैः।
अर्चिता जगतां धात्री तथा गन्धानुलेपनैः।।

भक्त्या समस्तैस्त्रिदशैर्दिव्यैर्धूपैस्तू धूपिता।
प्राह प्रसादसुमुखी समस्तान् प्रणतान् सुरान्।।

(देव्युवाच)

व्रियतां त्रिदशाः सर्वे यदस्मतोऽभिवांछितम्।।

(देवा ऊचुः)

भगवत्या कृतं सर्वं न किंचिदवशिष्यते।।
यदयं निहितः शत्रुरस्माकं महिषासुरः।
यदि चापि वरो देयस्त्वयास्माकं महेश्वरि।।
संस्मृता संस्मृता त्वं नो हिंसेथा परमापदः।
यश्च मर्त्यः स्तवैरेभिस्त्वां स्तोष्यत्यमलानने।।
तस्य वित्तर्दिविभवैर्धनदारादिसंपदाम्।
वृद्धयेऽस्मत्प्रसन्ना त्वं भवेथाः सर्वदाम्बिके।।

(ऋषिरूवाच)

इति प्रसादिता दैवेर्जगतोऽर्थे तथाऽऽत्मनः।
तथेत्युक्त्वा भद्रकाली बभूवान्तर्हिता नृप।।
इत्येतत्कथितं भूप संभूता सा यथा पुरा।
देवी देवशरीरेभ्यो जगत्त्रयहितैषिणी।।
पुनश्च गौरीदेहात्सा समुद्भूता यथाभवत्।
वधाय दुष्टदैत्यानां तथा शुम्भनिशुम्भयोः।।
रक्षणाय च लोकानां देवानामुपकारिणी।
तच्छ्रणुष्व मयाऽऽख्यातं यथावत्कथ्यामि ते।। ह्रीं ओ३म्।।
इति श्री मार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
शकादिस्तुतिर्नाम चतुर्थोऽध्यायः।। 4।।
उवाच 5 अर्धश्लोकौ 2, श्लोकाः 35, एवम् 42, एवमादितः 259।।

❀❀❀❀❀

कुलदेवी दधिमथी प्राकटय एवं चमत्कार

महर्षि दधिची की पावन भागिनी महामाया भगवती दधिमथी भारत वर्ष के विभिन्न प्रान्तों में बसे लाखों दाधीच (दाहिमा) ब्राह्मणों की कुल

देवी है। दाधीच ब्राह्मणों का कोई भी धार्मिक संस्कार बिना भगवती दधिमथी की पूजा अर्चना के पूर्ण नहीं हो सकता । महामाया भगवती दधिमथी की पुण्य भूमि राजस्थान राज्यान्तर्गत नागौर मण्डल मारवाड़ प्रदेश (गोठ मांगलोद ग्राम) में दाधीच कुल देवी सर्वत्र अपनी अनुपम सुषमा बिखेर रही है एवं कुल देवी मंदिर दाधीच समाज का श्रद्धा केन्द्र है। अपनी मनौतियों, बच्चों का मुण्डन संस्कार, जात, जडूला हेतु दोनों नवरात्रियों सहित वर्ष भर श्रद्धालु यहां आते रहते है।

शेषशायी भगवान विष्णु के नाभिकमल से ब्रह्माजी उत्पन्न हुए। और उनके तपोबल से उत्पन्न दस पुत्रों में महर्षि अथर्वा ऋषि भी थे जो अथर्ववेद के प्रणेता माने जाते है। उन्होंने जल में बिना किसी अरणी मंथन के अग्नि का प्रादुर्भाव कर वैज्ञानिक ढंग से प्राणभूत ऊर्जा (हाइड्रोपावर) का आविष्कार किया। यह मानव इतिहास में उनका प्रथम वैज्ञानिक योगदान था। वे परम तेजस्वी एवं भगवान के परम भक्त थे। उनका विवाह कदर्म ऋषि की विदुषी पुत्री शान्ता से हुआ। वे प्रजापति कहलाए।

भगवती का अवतरण

महर्षि अथर्वा की पत्नी शांता ने भगवती लक्ष्मी की तपस्या की। भगवती लक्ष्मी ने वरदान देते हुए कहा कि दैत्यराज विकटासुर का वध करने हेतु मैं तुम्हारे यहां पुत्री के रूप में जन्म लूंगी और देवताओं को अभय प्रदान करूंगी। इसके पश्चात भगवती लक्ष्मी ने शांता की पुत्री के रूप में जन्म लिया, जिसका नाम नारायणी हुआ।

सृष्टि के प्रारंभ से ही और असुर शक्ति का अस्तित्व रहा है। आध्यिमकता, नैतिकता, सदाचार एवं समर्पण की भावना देवी भक्ति का एवं भौतिक बल के माध्यम से सभी को अपने अधीन करने की लालसा, अनाचार, अमैत्री, अत्याचार आदि आसुरी शक्ति का द्योतक है।

उस समय आसुरी शक्ति के प्रतिनिधि दैत्यराज विकटासुर ने कठोर तपस्या करके ब्रह्माजी से अमरता का वरदान मांगा। किन्तु मृत्यु तो अवश्यम्भावी है। अतः स्त्री (जिसे वह अबला समझता था)को छोड़कर

अजेयता का वरदान ब्रह्माजी ने दिया।

वरदान पाकर दैत्यराज का आसुरी बल और अधिक बढ़ गया। उसने स्वर्ग, पाताल, नागलोक आदि को जीतकर देवताओं को राजश्री हीन कर दिया। आसुरी व मायावी शक्ति के माध्यम से स्वयं ब्रह्माजी की ब्रह्मशक्ति भी छीन ली, जिससे सृष्टि निर्माण की प्रक्रिया अवरूद्ध हो गई। दैत्यगुरू शुक्राचार्यजी की कृपा से उसने समुद्र में चन्द्रवती नामक विशाल नगरी का निर्माण करवाया और उसमें रहने लगा। योजनाबद्ध तरीके से पृथ्वी और देव लोक में वह अत्याचार करने लगा। देव और ऋषि संस्कृति में विश्वास करने वालों का विश्वास डगमगा गया। सभी और त्राहि त्राहि मच गई। प्रतिकार की क्षमता नष्ट हो गई।

विकटासुर का वध

दैत्यराज विकटासुर के अत्याचारों से त्रस्त सभी देवगण भगवान विष्णु की शरण में गए। भगवान विष्णु ने देवताओं को आशवस्त करते हुए बताया कि विकटासुर का वध कर संसार में पुनः देव संस्कृति स्थापित करने एवं समस्त प्राणियों को अभय प्रदान करने के लिए योगमाया महालक्ष्मी भगवती नारायणी के रूप में महर्षि अथर्वा के घर में प्रकट हुई है। वही इस दैत्य का नाश करेगी। आप वहीं जावें।

भगवान विष्णु के निर्देश पर सभी देवगणों ने महर्षि अथर्वा के आश्रम पर पहुंचकर भगवती नारायणी की अर्चना प्रार्थना की। देवताओं की प्रार्थना से प्रसन्न होकर भगवती ने उन्हें अभय का वरदान दिया। स्वयं अथर्वानंदिनी ने सभी दिव्यास्त्रों को धारण कर सिंह पर आरूढ़ होकर सप्त सिंधुओं का मंथन किया। विकटासुर को ब्रह्माजी के द्वारा दिए गए वरदान का स्मरण आते ही कि (मेरी मृत्यु सिर्फ स्त्री से ही हो सकती है) देवी के भय से दधि सागर में जाकर छिप गया।

इस पर भगवती ने दधि सागर का मंथन कर माघ शुक्ला अष्टमी को संध्याकाल में विकटासुर का वध किया। यह तिथि जन्माष्टमी के नाम से विख्यात है।

दधिमथी का नामकरण

दैत्यराज विकटासुर का वध से देवताओं की खोई हुई शक्ति पुनः प्राप्त हुई। ब्रह्माजी का सृष्टि सृजन का कार्य पुनः सामान्य हुआ। ब्रह्माजी ने दधि सागर का मंथन कर विकटासुर का वध करने वाली अथर्वानंदिनी का नाम दधिमथी रखा तथा महर्षि अथर्वा को पुत्र प्राप्ति का वरदान दिया तथा भगवती दधिमथी अपने भाई के वंश की रक्षा करती हुई उनकी कुलदेवी होने का आशीर्वाद दिया।

पिप्पलाद का पालन-

कालांतर में महर्षि अथर्वा पुत्र दधिची द्वारा विश्व कल्याण एवं देश धर्म की रक्षा हेतु दैत्यराज वृतासुर के वध के लिए अपनी अस्थियां प्रदान करने के बाद उनकी पत्नी वेदवती जो कि गर्भवती थी, सती होने को तत्पर हुई। तब अग्निदेव सहित सब देवताओं ने ऋषि पत्नी को स्मरण कराया कि आपके गर्भ में जो ऋषि का तेज विद्यमान है, वह रूद्रावतार है। पहले आप उसे उत्पन्न करे। इस पर ऋषि पत्नी ने शल्य किया द्वारा अपना गर्भ निकाल कर आश्रम में ऋषि द्वारा स्थापित अश्वस्थ वृक्ष (पीपल का पेड़) को सौंपते हुए गर्भस्थ बालक के रक्षा की प्रार्थना की। ऋषि पत्नी ने भगवती दधिमथी से प्रार्थना करते हुए कहा कि आप ही हमारी कुलदेवी है। आप इस दाध ीच कुल की रक्षा करें। कुलदेवी दधिमथी के सान्निध्य में पीपल वृक्ष पलने के कारण महर्षि दधिची के पुत्र का नाम पिप्पलाद हुआ। ब्रह्माण्ड पुराण के विश्वोत्पति प्रकरण में निम्न श्लोक द्वारा इसकी पुष्टि की है।

श्रीमन्नारायणद् ब्रह्मा, ब्रह्मणोऽथर्व विन्मुनिः।
दध्यइंगथर्वणाः तस्मात् पिप्पलादो महामुनिः।।

पिप्पलाद एक तपोनिष्ठ महर्षि हुए। उनका विवाह चक्रवर्ती राजा अनरण्य की पुत्री पद्मा से हुआ। उनके 12 तेजस्वी पुत्र हुए (बृहद्वत्स, गौतम, भार्गव, भारद्वाज, कौच्छस, कश्यप, शाण्डिल, अत्रि, पराशर, कपिल, गर्ग और लघुवत्स मम) जो बड़े विद्वान और तपस्वी

हुए। इन्होंने अनेक उत्कृष्ट सिद्धियां प्राप्त की। बृहद्वत्स एवं गौतम का विवाह अंगिरा की कन्याओं एवं बाकी दस ऋषियों का विवाह देव शर्मा की कन्याओं से हुआ। इन बारह ऋषियों के 144 पुत्र हुए। वे भी बड़े विद्वान और तपस्वी हुए। कुलदेवी भगवती दधिमथी की आराधना से इनका प्रभाव बढ़ता ही गया।

कपालपीठ का प्राकट्य एवं राजा मान्यता का यज्ञ

दक्ष प्रजापति के यज्ञ में अपने पति का अपमान एवं अपने पिता दक्ष द्वारा शिव निन्दा की ज्वाला से पीड़ित सती ने सशरीर यज्ञकुण्ड में प्रवेश किया। तब भगवान आशुतोष शंकर ने सती के शव को अपने कंधे पर रखकर भ्रमण किया। जहां जहां सती के शरीर के अवशेष गिरे, वे स्थान पवित्र शक्तिपीठ कहलाए। भगवती सती का कपाल पुष्कर क्षेत्रों से 32 कोस उत्तर में गोठ मांगलोद दो गांवो के बीच गिरा जो कपालसिद्ध पीठ से प्रसिद्ध है।

त्रेता युग में सूर्यवंशी अयोध्यापति राजा मान्धाता का पुराण प्रसिद्ध सात्विक देवेशी (दधिमथी) यज्ञ महर्षि वशिष्ठ की आज्ञा से इसी कपालपीठ क्षेत्र में हुआ। जिसके आचार्य महर्षि पिप्पलाद के 144 पौत्र थे। माघ शुक्ल सप्तमी को पूर्णाहूति के अवसर पर देवी दधिमथी का प्राकट्य हुआ। देवी ने यजमान एवं आचार्यो को आशीर्वाद प्रदान करते हुए राजा मान्धाता को कपाल पीठ पर मंदिर निर्माण का आदेश दिया। तत्काल यज्ञकुण्ड को जल में परिवर्तित करते हुए भगवती महामाया ने आशीर्वाद दिया कि जलकुण्ड में त्रिवेणी (गंगा, जमुना और सरस्वती) का निवास रहेगा। इसमें स्नान करने एवं कपालपीठ का दर्शन पूजन करने वाले सभी पापों से मुक्त होगे। दाधीच वंश की कुल देवी होने के नाते मेरी आराधना करने पर दाधीच कुल बुद्धिमान, यशस्वी एवं कुलवंत होंगे। मैं उनकी सदैव रक्षा करूंगी। जो भी व्यक्ति मेरी मनौती करेगा उसकी सभी मनोकामनाएं पूर्ण होंगी। राजा मान्धाता ने कपालपीठ पर मंदिर का निर्माण करवाया। तबसे यह कपालपीठ एक पवित्र तीर्थ स्थल माना जाता है।

श्रुतियों के अनुसार राजा मान्धाता द्वारा निर्मित यह मंदिर अनेक वर्षो तक गुप्त रही। बाद में एक दिन इसी स्थान पर गाय चरा

रहे ग्वाले को आकाशवाणी से महामाया दधिमथी ने संकेत दिया कि मैं भूमि से पुनः प्रकट हो रही हूं। अगर गायें भड़क जावें तो भयभीत मत होना। जब देवी प्रकट हो रही थी उसी समय सिंह की गर्जना सुनकर गायें भड़क उठी। ग्वाला देवी की बात भूल कर चिल्ला उठा जिसके फलस्वरूप देवी का पूरा स्वरूप ने निकलकर मात्र कपाल का ही प्राकट्य हुआ।

ऋषियों एवं देवों द्वारा देवी पूजन के दिन

पुष्कर के वासी दिव्य ऋषिगण वारानुक्रम से रविवार को महर्षि वशिष्ठ, सोमवार को वामदेव, मंगलवार को कपिल, बुधवार को अगस्त्य, गुरूवार को अथर्वा, शुक्रवार को अंगिरा, शनिवार को अत्रि, नवरात्रि में मार्कण्डेय, महारात्रि दीपावली को भगवान विष्णु, मोहरात्रि जन्माष्टमी को ब्रह्माजी एवं कालरात्रि शिवरात्रि को भगवान शिव कपाल पीठ पर आकर भगवती दधिमथी की पूजा अर्चना करते है। द्वापर में पाण्डव अज्ञातवास के काल में कपालपीठ के दर्शन करते हुए पुष्कर तीर्थ गये इसका उल्लेख पुराणों में मिलता है।

भगवती दधिमथी के चमत्कार

सन 1231में विदेशी कूर धर्मान्ध आक्रमणकारी मोहम्मद गजनवी भारत में मंदिर ध्वस्त करने के अपने अभियान के अन्तर्गत गोठ मांगलोद का मंदिर और कपालपीठ तोड़ने आया था। उस समय देवी चमत्कार से काले भंवरो ने सैनिकों पर भयानक आक्रमण कर दिया। मंदिर तोड़ने में असफल होने का कारण उसने कपालपीठ पर एक शिला रख कर उसको ढ़क दिया। सम्वत् 1903 में ब्रह्मचारी विष्णुदासजी के यहां पहुंचने पर उस शिला के चमत्कारिक ढंग से 5 टुकड़ों में विखंडित होने का विवरण मंदिर में लगे शिलालेख में उद्धृत है।

दाधिच कुल भूषण सिद्ध ब्रह्मचारी बुढ़ादेव (मेवाड़) निवासी श्री विष्णुदासजी महाराज ने कुलदेवी दधिमथी के कपाल पीठ को अपनी तपस्या स्थली बनाया। उन्होंने यहां अनेकों गायत्री के पुरश्चरण किये। भगवती की आज्ञा से वे उदयपुर गये। मार्ग में लकड़ी काटते एक बालक को देख कर उसे उदयपुर का राणा बनने की भविष्यवाणी की। बालक ने अपनी निर्धनता की बात बताई। इस पर ब्रह्माचारीजी ने कहा कि

भगवती दधिमथी की कृपा से उदयपुर का राजतिलक तेरे ललाट पर ही लगेगा, तू उदयपुर जा। इधर उदयपुर की राजगद्दी को लेकर दो पक्षों के बीच संघर्ष चल रहा था। प्रजा ने निर्णय किया कि ये दोनों पक्ष ही इस गद्दी पर बैठा दिया जाये। भगवती के चमत्कार से वही निर्धनि बालक जंगल में प्रजाजनों को मिला। उसका नाम स्वरूपसिंह रखा गया। कालांतर में भगवती ने महाराणा को अनेकों परचे दिये। उनको भगवती कृपा से पुत्र की प्राप्ति भी हुई।

मंदिर में लगे सम्वत् 1908 के शिलालेख के अनुसार ब्रह्मचारी विष्णुदासजी महाराजा की आज्ञा से महाराणा स्वरूपसिंहजी द्वारा मंदिर के गर्भगृह एवं सभामंडप के बाहर के चौक, तिबारियां, प्रकोष्ठ, दरवाजे, चारदीवारी, यात्री निवास, बावड़ी, शिवमंदिर आदि का निर्माण एवं कुण्ड का जीर्णोद्धार हुआ।

जोधपुर की महारानी की रोगमुक्ति भी भगवती की मनौती से चमत्कारी ढ़ंग से हुई जिस पर जोधपुर राज्यवंश ने मंदिर विकास में अपना योगदान किया। राणाजी के प्रधान शेरसिंहजी, जैसलमेर के पटवा जोरावरमलजी ने भी मंदिर विकास में अपना सहयोग दिया।

मंदिर में नवरात्रियों की सप्तमी एवं अष्टमी को श्रद्धालु भक्तजनों द्वारा श्री सूक्तम के मंत्रो से दुग्धाभिषेक होता है। चाहे जितने दूध से अभिषेक किया जावे, भगवती का चमत्कार है वह कुंडी से बाहर कभी भी छलकता नहीं है।

सम्वत् 2025 में इस कपालपीठ क्षेत्र में भयंकर बाढ़ से चारों ओर का क्षेत्र जलप्लावित हो गया। तथा मंदिर की चारदीवारी के बाहर अथाह जल था। किन्तु गर्भगृह में बाढ़ का पानी नहीं पहुंच पाया तथा ऐसी बाढ़ में पुजारीगण लोहे के कढ़ाव को नाव की तरह उपयोग में लेते हुए भगवती की नियमित पूजा अर्चना के लिए मंदिर तक पहुंचते थे। यह भी एक कौतहूल पूर्ण चमत्कार है। इस प्रकार भगवती के अनेकों चमत्कार लोगों ने प्रत्यक्ष देखें है।

भगवती दधिमथी के संबंध में आम मान्यता है कि यो जहां दुग्धाभिषेक करवाता है, घी का अखंड जोत (दीपक) स्थापित करता है, मंदिर मे अपनी मनौती के लिए नारियल ध्वजा और चूनड़ी अर्पण करता है। चूरमा का नैवेद्य चढ़ाता है, उसकी मनोकामना निश्चित ही पूर्ण होती

है। दाधिच समाज के लोग तो यहां अनिवार्य रूप से आते ही है वरन् इस क्षेत्र के तथा दूर दूर के अन्य समाज एवं संप्रदाय के श्रद्धालु भी अपनी मनोकामना की पूर्ति हेतु देवी के दर्शनार्थ बारहों मास आते रहते है तथा भगवती को अपनी कुलदेवी के रूप में पूजते है।

दोनों नवरात्रियों में विशाल मेले भरते है। इस अवसर का तो आनंद ही निराला है। दाधिच समाज के लोग जो सप्तमी के पूर्व ही आ जाते है। दूर दूर से आये बंधु आपसी परिचय सगाई संबंधो की चर्चाओं के साथ साथ समाज एवं मंदिर विकास की योजनाऐं बनाते है। अनेकों तपस्वी पूरी नवरात्रि यहां उपासना करते है। मंदिर एवं मेले की सारी व्यवस्था दाधीच समाज की एवं सभी संस्थाओं द्वारा की जाती है। भगवती की पूजा अर्चना पाराशर समाज के पुजारी ही करते है।

यह स्थान नागौर जिले में जायल तहसील के अन्तर्गत गोठ मांगलोद माताजी नाम से विख्यात है। यहां पहुंचने के लिए निकटस्थ रेल्वे स्टेशन नागौर, डीडवाना, डेगाणा है। यहां से माताजी एवं जायल के लिए बसें मिलती है। यह जायल से 12 किमी है।

❀❀❀❀❀

मां भगवती दधिमथी

गोठमांगलोद के अभिषेक का सामान

गुड़, नारियल 2, जनेव जोड़ा 4, सिन्दूर 100 ग्राम, चांदी का बरक 40 छोटा सा या 20 बड़ा, धीरत 250 ग्राम, शहद, शक्कर 1 किलो, दूध सवा 5 किग्रा, सुपारी 10, मोली कूंकूं, चावल, केसर, धूप, अगरबत्ती, कपूर, अत्तर की शिशी।

भगवती की पोशाक

ओढ़णी (साड़ी) साढ़े 5 फिट लंबा एवं साढ़े 5 फिट चौड़ा

लहंगा 10 फिट घेर, लंबा ढ़ाई फिट, नेफा ढ़ाई फिट

चोली लंबाई, चौड़ाई डेढ़ मीटर

लाल रंग सफेद असार बीच में

❀❀❀❀❀

कपाल पीठ तीर्थ की परिचय पत्रिका

(1.) प्रजापति दक्ष के यज्ञ में भगवान शंकर का अपमान होने पर महर्षि दधिची ने यज्ञ शाला का तिरस्कार यह कहते हुए कि यहां भयंकर अनर्थ होने वाला है, शीघ्र अपने आश्रम को लौट आए। पतिदेव का अपमान और पिता द्वारा शंकर की निन्दा सुन सती ने यज्ञ कुण्ड में प्रवेश किया और रूद्रगणों ने उपस्थित ऋषि मुनियों को दण्ड देते हुए दक्ष का सिर धड़ से उड़ा पूर्णाहूति कर, यज्ञ विध्वन्स कर चले गए। भगवान शंकर तो समाधि में थे। नारद द्वारा समाचार सुन चिन्तित हुए वे अपने को संभाल नहीं सके तुरंत दौड़ सती के शव को कंधे पर रख चिन्तातुर भ्रमण करते फिरे। जहां जहां सती के अंग के भाग गिरे वे सब महासती के प्रभावशील तीर्थ बन गए। महासती का कपाल पुष्करारण्य क्षेत्र के महावन बत्तीस कोस उत्तर में जहां भयंकर झाड़िया थी। जहां अब गोठ मांगलोद के दो गांवों के बीच का स्थान है, वहां महासती का कपाल गिरा। यहीं राजा मानधाता ने वशिष्ठ मुनि की आज्ञा से महर्षि दधिची के 144 पौत्रों को आचार्य चरण कर हजारों ऋषियों के साथ महावन को कटवाकर यज्ञ किया गया, वहीं यज्ञ कुण्ड अब जल कुण्ड में देवी के प्राकट्य के समय राजा और आचार्यों के प्रार्थना पर, इस स्थान का प्रभाव रखने हेतु परिणत देवी कृपा से हुआ। यही कपालपीठ तीर्थ भुक्ति मुक्ति को देने वाला और दाधीच वंश की कुल देवी का स्थान है। यह त्रेतायुग का स्वर्णमयी युग है।

(2.) द्वापर में पाण्डव जब वनवासी हुए तो अज्ञातवास में कुछ समय इस तपोभूमि में रहकर अपने कष्टों का निवारण करने हेतु महामाया से प्रार्थना करी, पाण्डव इस कपालपीठ तीर्थ से बहुत प्रभावित हुए।

(3.) कलियुग एक विष्णुदास ब्रह्मचारी, ये पंडित दाधीच वंश भूषण मेवाड़ निवासी श्री बलदेवजी के पुत्र थे। ये इसी पवित्र भूमि में पधारे तो इस स्थान को देख बड़े हर्षित हुए, चकित हुए जहां आकाशवाणी होकर धरती फटी, सिंह की गर्जना हुई, गाये चरती हुई भयभीत हो भागी, ग्वाला चिल्लाया अरे क्या निकल रहा है वहीं सती का कपाल मंदिर के गुम्बज सहित राजा मानधाता निर्मित पुनः समय पाकर निकल आया

था। लोग दौड़े आश्चर्य चकित हुए किन्तु सिंह के भय से रात को कोई नहीं ठहरे। पास के गांव का एक पुजारी सदा आता और पूजा कर चला जाता। ब्रह्मचारीजी पुजारी के पास गए और कहा– मैं ठहरना चाहता हूं तुम मेरे पास रहो तो पुजारी ने कहा रात को सिंह घूमता है मेरी हिम्मत नहीं। ब्रह्मचारीजी ने कहा सिंह तो भगवती का वाहन है, रक्षा के लिए इस उपवन में रहता है, हम मां के बालक है, बालकों की रक्षा मां करती है, इस तरह समझा पुजारी को, ब्रह्मचारीजी वहां रह, अधर स्तंभ के निकट बैठ तीन पुरश्चरन किए। स्वप्न में आज्ञा हुई तुम उदयपुर महाराणा के पास जाओ। ब्रह्मचारीजी उदयपुर पधारे वहां जंगल में जा रहे थे, तब एक लड़के को पेड़ पर लकड़ी काटते हुए देखा, ब्रह्मचारीजी ने कहा लड़के तेरे भाग्योदय हो गए है, मां भगवती की कृपा से तुम कल उदयपुर महाराणा की गद्दी पर बैठोगे, उसने का महाराज खाने को तो घर में कुछ नहीं है, मैं गरीब का लड़का हूं, ऐसा कहां भाग्य है। ब्रह्मचारीजी उदयपुर पधारे वहां विश्राम किया वहां राजगद्दी के लिए दो में संघर्ष चल रहा था। निर्णय प्रजा ने किया कि जो प्रातः जंगल में पहले मिले उसे ही गद्दी पर बैठा दिया जाए। कपाल पीठेश्वरी भगवती की कृपा से वही लडऋका जिसको ब्रह्मचारीजी ने भविष्य संदेश सुनाया था उसका नाम स्वरूप सिंह था। मां की कृपा से भाग्योदय हो कर उदयपुर राजगद्दी पर सुशोभित हुआ। उसने ब्रह्मचारीजी की खोज करवाई, बुलाया स्वागत कर कहा बताइये मेरे पर किसकी कृपा हुई है। मैं उसका दर्शन करना चाहता हूं। ब्रह्मचारीजी महाराणा को कपाल पीठेश्वरी भगवती जगदंबा के दर्शन करवाये। महाराणा भगवती को देख रो पड़े । करूणा करने वाली मां स्वप्न में भी कभी आशा नहीं थी जिस पद व राज्य को तूने दिया है मां मैं तुझे कभी नहीं भूल सकता। महाराणा ने जोधपुर नरेश को इस स्थान का प्रभाव बताया और बनारण्य जंगल को कटवा कर विशाल खंभो के रचित पुरातन महामंदिर की शोभा जहां ब्रह्मचारीजी ने पुरश्चरण किया था देख उस स्थान में चार चौक, चार दरवाजे, मण्डप स्थान महाकुण्ड, चार दिवारी, यात्रियों के आवास के स्थान सचिव को भेज बनवाये। यह सारा कार्य विक्रमीय सम्वत 1903 में हुआ और श्री विष्णुदासजी ने पुनः यहां पधार कर 18 पुरश्चरण और किए।

मोहम्मद गजनवी– संवत 1231 में मेवाड़ के महाराणा द्वारा भवन निर्माण के बहुत पूर्व कपाल पीठ तीर्थ पर आकर कपाल को तोड़ने की इच्छा की उसी समय उस महा बन के काले काले भंवरो ने बादशाह पर तीव्र आक्रमण किया। तोबा तोबा कहकर बादशाह भगा, दिमाग ठीक होने पर यह आदेश दिया कि इस पर एक बड़ी शिल्ला रख दो ताकि मेरे यहां की याद बनी रहे। तब सिपाहियों ने कम्बले ओढ़ ओढ़ कर शिला कपाल पर रख दी बाद में बादशाह को अफसोस हुआ। हाथ जोड़कर क्षमा मांगी और उस बनारण्य का पट्टा मां के नाम कर गया। कपाल शिला के स्पर्श होते ही कपाल 672 वर्ष गुप्त रही। सं. 1903 में शिला के 3 टुकड़े स्वतः ही हो गए। जो अवशेष अब भी पड़े है, कपाल 1903 में पुनः प्रकट हुई। बादशाह ने इसके प्रभाव को समझा तो 170 वर्ष तक नीचे के स्थान को हिन्दु और उपर शिला को मुसलमान पूजते रहे।

जोधपुर नरेश महाराजा सरदार सिंह जी की महारानी जी 1980 वि. भयंकर बिमारी से ग्रसित होने पर मां की आराधना उपासना करने पर पूर्ण स्वस्थ हुई और 1981 विक्रमीय में रामकरण जी आसोपा को भेजकर तीस हजार रूपये मंदिर में लगाये। दक्षिणी चारदीवारी में तिबारे यात्रियों के लिए बनवाए। माताजी की अखंड जोत करवाई।

1. केसरी चंद जयचंद लाल भूनेड़िया लाडनूं वर्तमान मालचंदजी सत्तर वर्ष सं. 1994 विक्रमीय से चार किलो घी बराबर भेज रहे है।
2. माईजी भगवती के भण्डार से अखण्ड जोत सदा रहती है।

बड़ी नौपत– सं. 1904 में मेड़ता सिटी के मुसलमान मजिस्ट्रेट के द्वारा सहर्ष भेंट। महर्षि दधिची का पावन आश्रम जहां महर्षि ने देवताओं द्वारा संपूर्ण तीर्थो का जल मंगा स्नान कर अपने पावन शरीर का दान दिया था। वह नेमीषारण्य क्षेत्र दधिची ऋषि आश्रम मिश्रित तीर्थ से प्रसिद्ध संपूर्ण कामनाओं और पितरों को मुक्ति देने वाला कहलाया। यह स्थान आगरा से कानपुर लखनऊ रेलवे मार्ग से बालामऊ स्टेशन के समीप है। तीर्थ यात्री मिश्रित तीर्थ को देखकर महर्षि दधिची के पावन नाम से बड़े प्रभावित होते है। करदम ऋषि बड़े तपस्वी और तेजस्वी ज्ञान के भंडार थे। स्वयंभूव मनु की कन्या देवहूतिजी आपको अर्पित की

गई थी। उससे नौ कन्याएं उत्पन्न हुई जो ब्रह्मा की आज्ञा से उनके नौ मानस पुत्रों को भेंट की। जो महान तपस्या की मूर्ति थी। इनसे एक महाज्ञानी कपिलदेव पुत्र हुआ जिसने पिता के तपस्या में जाने के बाद ज्ञान दिया। आपक नाम कपिल देव मुनि हुआ। बीकानेर के पास कोलायत में आपने कड़ी तपस्या की थी जिसके कारण कोलायत तीर्थ कहलाता है।

❀❀❀❀❀

दधिमथी (भगवती) चालीसा

ध्यानम्

ओ३म् भुर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियोयोनः प्रचोदयात्।

।। दधिमथ्यै नमः।।

चन्द्र छटा सी शोभती, दधिमथी जगदंब
सकल जगत को पोखती, दे माता अवलम्ब।। 1।।
विष्णु शिवा मनमोहिनी, लोचन भव्य ललाम
दिव्य स्वरूप सुहासिनी, कोटि कोटि प्रणाम।। 2।।
जय दाधिचों की कुल माता, करूणा ममतामय परित्राता।। 3।।
सर्व मंगले हे महतारी, अणु अणु में शक्ति संचारी।। 4।।
रूप मनोहर मंगलकारी, मन तन के सब संकट हारी।। 5।।
सुघड़ नाक में नथली राजे, अधर गुलाबी सुंदर साजे।। 6।।
गले विराजत मुक्ता माला, नयन सुशोभित कंचन प्याला।। 7।।
बिन्दी भव्य ललाट सोहती, रूपल मात विश्व मोहती।। 8।।
मां के सिर पर छत्र विराजे, झालर शंख नगाड़े बाजे।। 9।।
हुए आरती सांझ सवारे, दर्शन कर धन भाग्य हमारे।। 10।।
जय जय जय हे जय जगज्जननी, कर्मशील जय विव भरनी।। 11।।
तेरे रूप अनेको माता, जय मां सबकी भाग्यविधाता।। 12।।
वज्र समान है शक्ति शालिनी, देवी दुःख दारिद्रय दालिनी।। 13।।
चामुण्डा मां सिंह वाहिनी, दानव दैत्य दुष्ट वाहिनी।। 14।।
हाथ खड्ग त्रिशूल धारिणी, नहीं किसी से कभी हारिणी।। 15।।

सरस्वती मां वीणा वादिनी, ह्रतंत्री के नाद नादिनी।। 16।।

धूप दीप कर भोग लगावें, वह कष्टों से मुक्ति पावे।। 17।।

पुष्प चढ़ाकर करें आरती, उनके सब दुःख अम्ब टारती।। 18।।

जय जय जय कुलदेवी माता, दधिमथी मां सबकी त्राता।। 19।।

निशि दिन तेरा नाम सुहाता, जो लेता वह सब सुख पाता।। 20।।

रोग शोक उनके मिट जाते, जो मां का चालीसा गाते।। 21।।

जो लख बार पढ़े चालीसा, सिद्धि मिले साखी गौरीसा।। 22।।

अमर सुहाग वधु को मिलता, कन्या को वांछित वर मिलता।। 23।।

भरे मात भण्डारे खाली, ऐसी गोठ मांगलोद वाली।। 24।।

अमृत वर्षा कर देती मां, अन्न धन से घर भर देती मां।। 25।।

बल विद्या बुद्धि देती मां, सारे कष्ट हटा देती मां।। 26।।

सुख दाता माता दुःख हर्ता, अग जग पालन कर्ता भर्ता।। 27।।

मां की महिमा है अति भारी, तीन लोक में सबसे न्यारी।। 28।।

माता सदा सदा सुख दायी, भक्तों को देती प्रभुताई।। 29।।

दिग्दिगंत है मां की चर्चा, खुद सुरगण भी करते अर्चा।। 30।।

तू दुर्गा तू ही गायत्री, गौरी लक्ष्मी तू ही सावित्री।। 31।।

वेद ऋचाओं ने भी गाया, समझ न आवे मां की माया।। 32।।

मां आशीष उसे ही देती, जो भक्ति की करते खेती।। 33।।

सुधा वर्षिणी विश्व मोहिनी, नव दुर्गा में श्रेष्ठ सोहिनी।। 34।।

काम कोध मद लोभ हटा दो, जगदम्बे दुःख क्षोभ मिटा दो।। 35।।

दधिमथी जय मंगलकारी, जगदंबे मां भवभयहारी।। 36।।

अंबा को जो कोई ध्यावे, उसके सब संकट कट जावे।। 37।।

कृपा करो हे दधिमथी माता, श्रीमन्त तो तेरे गुण गाता।। 38।।

मां हमको बस कृपा चाहिए, सब पर शीतल नजर चाहिए।। 39।।

जो मां का सुमिरन करे, दधिमथी उसकी ढ़ाल,
दुःख दारिद्रता को मिटा, अंबा करे निहाल।। 40।।

❀❀❀❀❀

अभिलाषा

दधिमथी तेरे चरणों की, अगर धूल जो मिल जावे।

सच कहता हूं मेरी–2, तकदीर बदल जावे।। दधिमथी......।।
सुनते है तेरी रहमत, दिन रात बरसती है।
इक बूंद जो मिल जावे, दिल की कली खिल जावे।। दधिमथी......।।
ये मन बड़ा चंचल है, कैसे में तेरा भजन करूं।
जितना इसे समझाऊँ–2, उतना ही मचल जाये।। दधिमथी......।।
नजरों से गिराना ना मुझे, चाहे जितनी सजा देना।
नजरों से जो गिर जाये, मुश्किल है फिर संभल पाना।। दधिमथी......।।
मैया इस जीवन की बस, एक तमन्ना है।
तुम सामने हो मेरे–2, मेरा दम ही निकल जावे।। दधिमथी......।।

❀❀❀❀❀

नागौर से माताजी के लिए बस आने का साधन

सुबह नागौर से–सुबह 6 बजे नागौर से दिल्ली वाया गोठ मांगलोद।
सुबह 7 बजे नागौर से परबतसर वाया गोठ मांगलोद।
सुबह 9 बजे नागौर से खारी वाया गोठ मांगलोद।
सुबह 12 बजे नागौर से परबतसर वाया गोठ मांगलोद।
दोपहर– दोपहर 2 बजे नागौर से परबतसर वाया गोठ मांगलोद।
दोपहर 4 बजे नागौर से खारी वाया गोठ मांगलोद।
दोपहर 5 बजे नागौर से माताजी वाया गोठ मांगलोद।
सांय– सांय 6 बजे नागौर से खारी वाया गोठ मांगलोद।

❀❀❀❀❀

मूंडवा से माताजी के लिए बस आने का साधन

सुबह– सुबह 9 बजे मूंडवा से डीडवाना वाया गोठ मांगलोद।
सुबह 11 बजे मूंडवा से डीडवाना वाया गोठ मांगलोद।
दोपहर– दोपहर 3.30 बजे मूंडवा से डीडवाना वाया गोठ मांगलोद।

❀❀❀❀❀

जायल से नागौर वाया माताजी

सुबह– सुबह 6.30 बजे जायल से नागौर वाया गोठ मांगलोद।

	सुबह 8.30 बजे माताजी से नागौर वाया गोठ मांगलोद।
	सुबह 9.30 बजे माताजी से नागौर वाया गोठ मांगलोद।
	सुबह 11 बजे माताजी से नागौर वाया गोठ मांगलोद।
दोपहर–	दोपहर 1 बजे माताजी से नागौर वाया गोठ मांगलोद।
	दोपहर 3 बजे जायल से मूंडवा वाया गोठ मांगलोद।
	दोपहर 4 बजे जायल से नागौर वाया गोठ मांगलोद।
सांय–	सांय 5 बजे जायल से नागौर वाया गोठ मांगलोद।
	सांय 6.30 बजे दिल्ली से नागौर वाया गोठ मांगलोद।

❀❀❀❀❀

तरनाऊ से माताजी

सुबह–	सुबह 10.30 तरनाऊ से नागौर वाया माताजी।
संध्या–	संध्या 5.30 तरनाऊ से नागौर वाया माताजी।

नजदीक रेल्वे स्टेशन– नागौर, डेगाना, मेड़ता, डीडवाना।

❀❀❀❀❀

❀❀❀❀❀

महत्वपूर्ण सूचना

दधिमती माताजी गोठ मांगलोद के प्राचीन मंदिर में ब्राह्मण पाराशर परिवार शुरू से ही पूजा करते आए हैं।

❀❀❀❀❀

मां दधीमति का मनोकामना अधर खम्भ